आषाढ़ का एक दिन : एक विश्लेषण

त्रिभुवन विश्वविद्यालय

मानविकी तथा सामाजिक संकाय

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

में

हिन्दी स्नातकोत्तर (एम.ए. हिन्दी) के

पंचम पत्र (विषय कोड नं.५७०) के रुप में

प्रस्तुत

शोधपत्र

शोधार्थी

धनमाया राई

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

त्रिभुवन विश्वद्यिालय कीर्तिपुर

काठमाण्डौ, नेपाल

२०१८

सिफारिस पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि "आषाढ़ का एक दिन : एक विश्लेषण" शीर्षक मेरे निर्देशन में इस विभाग की छात्रा धनमाया राई ने किया है । स्नात्तकोतर पंचम पत्र (विषय कोड नं. ५७०) के रुप में प्रस्तुत इस शोध पत्र को त्रिभुवन विश्वविद्यालय द्धारा मूल्यांकन के लिए अग्रसारित करती हूँ ।

....

डा. श्वेता दीप्ति

शोध निर्देशक

हिन्दी केन्द्रीय विभाग

त्रिभुवन विश्वविद्यालय,

कीर्तिपुर, काठमाडौँ

स्वीकृत प्रमाण पत्र

धनमाया राई

द्धारा प्रस्तुत

“आषाढ़ का एक दिन : एक विश्लेषण”

शोधपत्र मूल्यांकन समिति

क्रमसंख्या	पद	नाम	हस्ताक्षर
१.	विभागीय प्रमुख	डाँ. संजीता वर्मा	....
२.	शोध निर्देशक	डाँ. श्वेता दीप्ति	....
३.	बाह्य परीक्षक	डाँ. संजीता वर्मा	....

कृतज्ञता ज्ञापन

यह शोध पत्र त्रिभुवन विश्वविद्यालय के मानविकी तथा समाजिक शास्त्र संकाय अन्तर्गत स्नातकोत्तर में निर्धारित पाठयक्रम के पंचम प्रश्न पत्र के रुप मे हिन्दी विषय के स्नातकोत्तर की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया गया है ।

प्रस्तुत शोधपत्र हमने हिन्दी केन्द्रीय विभाग की उप. प्राध्यापक डाँ श्वेता दीप्ति के निर्देशन में पूरा किया है । शोधपत्र लेखन प्रारम्भ से अन्त तक बार-बार सक्रिय कराने वाली एंव सम्पूर्ण संकलन लेखन प्रति कार्य भार सम्भालने वाली । आपके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ ।

इसी प्रकार सलाह, सुझाव हौसला बढाने के लिए हिन्दी केन्द्रीय विभाग के विभागीय प्रमुख डाँ संजीता वर्मा एवं सम्पूर्ण गुरु वर्ग में कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ तथा प्रशासनिक कर्मचारियों के प्रति धन्यवाद व्यक्त करती हूँ ।

इसी प्रकार उचित संस्कार देकर विभिन्न सहयोग एवं अध्ययन कराने वाले परम पूज्य माताजी श्री शिव कुमारी राई, पिता श्री डिल्ली बहादुर राई प्रति सदैव ऋणी हूँ तथा बहन दिपा राई जिसने हर परियोजना कार्य से लेकर शोधपत्र तक आवश्यक सहयोग, सलाह, सुझाव दिया एवं गजेन्द्र क्षेत्री और प्रिय मित्र विभा कुमारी दास के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ ।

इसी प्रकार इस शोधपत्र में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सभी मददगार, सहयोगी मित्रगणों के प्रति धन्यवाद ।

विषय सूची

क. सं. विवरण	पृष्ठ संख्या
प्रथम अध्याय	**१-४**
१.१ पृष्ठभूमि	१-३
१.२ शोध का शीर्षक	४
१.३ शोध का प्रयोजन	४
१.४ शोध का उद्देश्य	४
१.५ अध्ययन सीमा	४
द्वितीय अध्याय	**५-२०**
२.१ मोहन राकेश	५
२.२ जीवनी	५-८
२.३ रचनाएँ	८-१७
२.४ काल	१७-२०
तृतीय अध्याय	**२१-३७**
३.१ आषाढ़ का एक दिन : कथावस्तु	२१-२७
३.२ नाटक का उद्‌देश्य	२७-२८
३.३ पात्र योजना	२८-३१
३.४ पात्रों की संख्या	३२
३.५ भाषा-शिल्प	३२-३६
३.६ आषाढ़ का एक दिन मंचीय दृष्टिकोण से कितना सफल और कितना असफल	३६-३७

चतुर्थ अध्याय **३८-५७**

४.१ चरित्र चित्रण की पद्धतियाँ ३८

४.२ कालिदास का चरित्र चित्रण ३८-४४

४.३ मल्लिका का चरित्र चित्रण ४४-४९

४.४ विलोम का चरित्र चित्रण ४९-५१

४.५ अम्बिका का चरित्र चित्रण ५१-५२

४.६ प्रियंगुमंजरी ५२-५४

४.७ मातुल ५४-५६

४.८ दन्तुल ५६

४.९ निक्षेप ५६-५७

४.१० रंगिणी, संगिनी ५७

४.११ अनुस्वार, अनुनासिक ५७

पंचम अध्याय **५८-५९**

५.१ उपसंहार ५८

५.२ टिप्पणी ५९

५.३ संदर्भ पुस्तक ५९

प्रथम अध्याय

१.१ पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के इतिहास की परम्परा का महत्वपूर्ण अंग उसका आधुनिक काल है । जिसने भाषा, साहित्य और उसके सामाजिक सन्दर्भ को निश्चित तथा आवश्यक कम में संगठित किया । भारतेन्दु युग से लेकर आज तक का सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य निश्चित कम में विकसित हुआ है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी को आधुनिक काल का पिता जाना जाता है । वे हिन्दी में आधुनिकता के पहले रचनाकार थे । इन्होंने हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के रुप में प्रतिष्ठित करने की दिशा में अपनी प्रतिभा का उपयोग किया ।

भारतेन्दु बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे । हिंदी पत्रकारिता, नाटक और काव्य के क्षेत्र में उनका बहुमुल्य योगदान रहा । हिन्दी में नाटकों का प्रारंभ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है । भारतेन्दु के नाटक लिखने की शुरुआत बंगला के विद्यासुंद (१८६७) नाटक के अनुवाद से है । यद्यपि नाटक उनके पहले भी लिखे जाते रहे किंतु नियमित रुप से खडीबोली में अनेक नाटक लिखकर भारतेन्दु ने ही हिन्दी नाटक की नींव को सुदृढ़ बनाया ।

हिन्दी नाटक के क्षेत्रपर भारतेन्दु युग में अनेक नाटककारों ने अपने-अपने स्थान में योगदान दिया हे । भारतेन्दु ने जो मार्ग प्रदर्शन किया। प्रसाद के आगमन तक हिन्दी नाट्य-जगत में वही प्रकाश दिखता है । उस काल में नाटक वृक्ष ने शाखा-प्रशाखाओं के रुप में विस्तार किया । जिसमें नाटकों के ये प्रकार दिखलाई पड़ते हैं - पौराणिक, प्रेम नाटक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, रंगमंचीय एवं अनूदित ।

प्राचीन महापुरुषों के प्रति सदा आदर रहा है और रहेगा । भारतेन्दु के समय में नवोन्मेष हो रहा था, अतः स्वाभावतः प्राचीन के प्रति अधिक दृष्टि गई । इसका फल यह हुआ कि पौराणिक नाटकों का प्रणयन अधिक हुआ जिनमें आदर्श की पताका फहराई गई । प्रसाद तक पौराणिक नाटकों का प्रमुख धारा के रुप में होता रहा । सत्य हरिश्चन्द्र (सन् १८७५), सती प्रताप (सन् (१८८३) पौराणिक नाटक के उदाहरण हैं ।

ऐतिहासिक नाटक आधुनिक हिन्दी नाटकों का नवीन प्रयास था , जो पश्चिम से प्रभावित था । अतः हिन्दी में एतिहासिक नाटकों की धारा बालकृष्ण भट्ट एवं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से प्रारम्भ हुई और जो बराबर गतिवान रही । ऐतिहासिक नाटकों में नायक तथा नयिका प्रधान नाटक हैं और सुखान्त दुखान्त भी । प्रारम्भिक ऐतिहासिक नाटक बालकृण भट्ट कृत 'चन्द्रसेन (सन् १८७७)' एवं भारतेन्दु कृत 'नील देवी (सन् १८८०)', राधाकृष्ण दास कृत 'महारानी पद्ममावती (सन् १८८२)' है ।

नाटक अपने समय का प्रतिविम्ब होता है, यह उक्ति सामाजिक एवं राजनीतिक नाटकों में अधिक चरितार्थ होती है । आधुनिक हिन्दी नाटककारों की सबसे बड़ी देन है, सामाजिक एवं राजनीतिक नाटकों का प्रणयन । सामाजिक नाटको में नाटककारो ने अपने समय की सामाजिक समस्याओं को पूरी ईमान्दारी से चित्रित किया । जिसमे 'वैदिकी हिंसा' (सन् १८७३), 'बाल विवाह' (सन् १८७४), 'विद्याविलासी सुखबंधनी' (सन् १८८४) आदि हैं ।

इसीप्रकार राजनीतिक नाटकों में तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का यथार्थ चित्रण दिया । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कृत 'भारत दुर्दशा' (सन् १८७६) एवं 'भारत जननी' (सन् १८७७), शरदकुमार मुखर्जी कृत 'भारतोद्धार' (सन् १८८३) आदि है । इसीप्रकार प्रेम नाटक और रंगमंचीय नाटक भी लिखे गए । और भारतेन्दु के नाटकों में जो राष्ट्रिय चेतना दिखाई पड़ती है, उसका संम्यक् विकास प्रसाद के नाटकों में हुआ । भारतेन्दु के नाटकों में जिस-जिस भारतीय तथा पाश्चात्य शैली का प्रयोग किया गया है, उसे भी प्रसाद ने अपने ढंग से अपनाया । नाटक के क्षेत्र में प्रसाद का आविर्भाव कई दृष्टियों से नई घटना है । भारतेन्दु के नाटकों में राष्ट्रीय चेतना का सुसंगठित रुप नही मिलता, पर प्रसाद ने उसे ठोस रुप में अपने नाटकों के माध्यम से साकार किया, राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ एक समय तक एक ठ़ोस राष्ट्र चेतना कतिपय जागरुक विद्धानों तक ही केन्द्रित थी । किन्तु, प्रसाद के समय से यह जन जीवन तक ही केन्द्रित थी । किन्तु, प्रसाद के समय से यह जन जीवन का अंग बन चुकी थी ।

प्रसाद रोमांटिक नाटककार थे । इसीलिए नाटकों के वाह्य पक्ष सँवारने में उनका मन उतना नहीं रम सका, जितना जीवन की उलझनपूर्ण गहन समस्याओं के विश्लेषण में । मूलतः रोमांटिक होने के कारण वाह्येपचार की उपेक्षा करना उनके लिए स्वाभाविक था । परन्तु भारतीय संस्कृति के प्रति गहन आस्था ने उनकी रोमांटिक

प्रकृति को बहुत संयमित और नियंत्रित भी किया । सन् १९२१ से ३३ तक उनके नाटकों के लिखने का क्रम बराबर चलता रहा । विशाल (सन् १९२१), अजात शत्रु (सन् १९२२), जनमेजय का नागयज्ञ (सन् १९२३), कामना (सन् १९२३-२४), स्कन्तगुप्त (सन् १९२८), चन्दगुप्त (सन् १९२८), एक घुँट (सन् १९२९) और ध्रुवस्वामिनी (सन् १९३३) ।

प्रसाद युग के बाद कई नाटककारों का जन्म हुआ । उन सभी नाटककारों की कृतियों स्थायी बन न सकी । क्योकि बौद्धिक उथल-पुथल और परिवेश तथा मूल्यगत परिवर्तनों की छाप बड़ी सतही, कृत्रिम, बल्कि प्रायः निराधार और मिथ्या रही ।

इसके बावजुद छठी शताब्दी में नाट्य आन्दोलन के विभिन्न दिशाओं में, चाहे जितने धीमे ही सही, अग्रसर और आत्म सजग होने लगा । सन् १९५९ में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की स्थापना और उसमें नाट्य प्रदर्शनों की भाषा के रुप में हिन्दी की स्वीकृति हुई । जिसने हिन्दी नाटक को कई प्रकार से समृद्ध किया– शिक्षित हिन्दी भाषा अभिनेता तैयार करने की दृष्टि से, रंग शिल्पों के ज्ञान के प्रसार की दृष्टि से, और इन सबसे अधिक हिन्दी के मौलिक तथा विश्व तथा भारत की अन्य भाषाओं के अनूदित श्रेष्ठ नाटकों के प्रदर्शन की दृष्टि से । हिन्दी नाट्क के सामने इससे नंयी संभावनाएँ भी खुलीं और नक नयी चुनौती भी सामने आयी । इन दोनों ही बातों की कुछ छाप सन् १९५८ के आसपास के और परवर्ती हिन्दी नाटक साहित्य पर दिखाई पड़ती हैं । जिसका सबसे विशिष्ट और सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण मोहन राकेश का 'आषाढ़ का एक दिन' (सन् १९५८) है । जो आधुनिक हिन्दी नाटक की श्रेष्ठतम उपलब्धियों में गणनीय हैं ।

यह नाटक राकेश जी को हिन्दी के शीर्षस्थ नाटककारों में प्रतिष्ठि करता है और हिन्दी नाटक और रंगमंच को भारतीय नाटकों और रंगमंच को समकक्ष लाता है । जिस समय हिन्दी में पूर्ण नाटक लुप्तप्राय था, हिन्दी रंगमंच पिछड़ा हुआ, निष्क्रिय दिखाई देता था और अन्य भाषाओं के नाटक ही हिन्दी रंगमंच पर प्रस्तुत होते थे, उस समय इस नाटक ने रंगमंच पर पुनः पूर्ण नाटक की शुरुवात ही नहीं की बल्कि नाटक और रंगमंच आन्दोलन को एक साथ साँस्कृतिक और सर्जनात्मक चेतना से समपृक्त करने में अकेला यह नाटक जितना सफल हुआ, आधुनिक युग में अन्य कोई नाटक नहीं । नाटक लेखन के साथ पूरे समूह से समान संवेदनशील, सतर्कता, कलात्मक

गम्भीरता और पारस्परिक सहयोग की माँग करता है, साथ ही नाटक भी अन्य विधाओं की तरह बल्कि कुछ मानों में उनसे भी अधिक प्रभावशाली ढंग से जीवन की सारी विविधता से गहरा साक्षात्कार करा सकता है ‘आषाढ़ का एक दिन’ इसका प्रमाण है । प्रस्तुत शोध में सीमाओं के तहत इसी नाटकको पर संक्षिप्त विश्लेषण करने की कोशिश की गई है ।

१.२ शोध का शीर्षक

प्रस्तुत शोध पत्र क शीर्षक “आषाढ़ का एक दिन : एक विश्लेषण” है । चूंकि प्रस्तुत पत्र में मोहन राकेश कृत आषाढ.का एक दिन में एक विश्लेषण पर प्रकाश डालने की कोशिश की गई है । अत: इस दृष्टिकोण से शोध का शीर्षक विषयनुरुप है ।

१.३ शोध का प्रयोजन

प्रस्तुत शोध कार्य त्रिभुवन विश्वविद्यालय मानविकी तथा सामाजिक संकाय अन्तर्गत हिन्दी केन्द्रीय विभाग की स्नातकोत्तर उपाधि हेतु, हिन्दी पाठ्यक्रम में आंशिक आवश्यकता की पूर्ति करता है ।

१.४ शोध का उद्देश्य

शोध का उद्देश्य आषाढ़ का एक दिन नाटक को संक्षिप्त रुपमें विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है ।

१.५ अध्ययन सीमा

किसी भी कार्य की सुनिश्चितता और पूर्णता के लिए एक प्रारुप और सीमा रेखा तय की जाती है । जिससे शोध कार्य में सहजता और सरलता आ सकें । इस शोध पत्र की निम्न सीमाएँ है ।

१. इस शोध पत्र में मोहन राकेश जी का व्यक्तित्व परिचय, कृतित्व एंव रचना काल पर प्रकाश डाला गया हैं ।

२. आषाढ़ का एक दिन नाटक अध्ययन किया गया है ।

३. यह शोध पुर्णतया पुस्तकालीय सामग्रियों के अध्ययन पर आधारित है ।

द्वितीय अध्याय

२.१ मोहन राकेश

मोहन राकेश का हिन्दी नाटक के आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण योगदान है और उन्हें 'नये बीज बोनेबाले नाटककार' कहा गया है । हिन्दी नाटक के क्षितिज पर मोहन राकेश का उदय उस समय हुआ जब स्वाधीनता के बाद पचास के दशक में सांस्कृतिक पुनर्जागरण का ज्वार देश में जीवन के हर क्षेत्र को स्पन्दित कर रहा था । उनके नाटकों ने न सिर्फ नाटक का आस्वाद, तेवर और स्तर ही बदल दिया, बल्कि हिन्दी रंगमंच की दिशा को भी प्रभावित किया । उसके पहले, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद जेसे प्रतिभावन रचनाकारों के बावजुद, हिन्दी नाटक अधिकांशतः या तो सस्ते में मनोरंजन का साधन बना हुआ था या फिर नाटय पुस्तकों की दीवारों के पीछे बन्द था । पचास के दशक में उसे धीरे-धीरे एक अत्यन्त ही समर्थ किन्तु जटिल और परिश्रम तथा प्रशिक्षण – साध्य कला माध्यम के रुप में स्वीकृति मिलना शुरु हुआ, और साथ ही नाटयकर्मियों से भी अधिक जागरुकता संवेदनशीलता और कलात्मक गंभीरता की अपेक्षा होने लगि ।

मोहन राकेश जी ने कम ही नाटक लिखे परंतु सभी अपने-अपने ढ़ंग से हिन्दी नाट्य-परम्परा को आगे बढ़ाने में सहायक हुए हैं । ये नाटक जगह-जगह और बार-बार खेले गए । आज भी खेले जा रहे हैं और भविष्य में खेले जाते रहेंगे । इनसे अनेक निर्देशक और कलाकार जुड़े और उन्होंने अपनी प्रस्तुतियों से मंचन के अनेक स्वरुप सामने रखे ।

२.२ जीवनी

मोहन राकेश का जन्म ८ जनवरी, १९२५ में अमृतसर के वकील परिवार में हुआ था । उनका पिताका नाम करम चन्द्र गुंलनी था । उनका नाम मदन मोहन गुंलनी रखा गया । वाद में उन्हें मदन मोहन से मोहन राकेश कहाँ जाने लगा । उनके पिता एक अच्छे नागरिक होने के साथ-साथ, एक सामाजिक कार्यकर्ता और सांस्कृति एवं साहित्यिक संघ-संस्थाओं जो बच्चों की पढाइयों कि कृयाकलापों में रुची रखते थे

उसमे भी आवद्ध थे । परन्तु उनके पिता वकील, सामाजिक कार्यकर्ता, संघ-स्थाओ से आवध होकर भी परिवारिक खर्च की वजह से कर्ज से दवे थे ।

राकेश जी की उम्र मात्र सोलह साल की थी जब उनके पिता का जिधन हो गया और तब से एक लम्बे संघर्ष को वे और उनकी दिदि झेलते रहे । विरासत में उनके पिता के द्वारा संगित और साहित्य हासिल हुआ परन्तु पैसा भी नसिब नहिँ हुआ ।

इनकी शुरु की शिक्षा अमृतसर में की हुई । बाद में उच्च शिक्षा के लिए वे लाहौर गए । वहां उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से अंग्रेजी और हिन्दी भाषा में स्नातकोत्तर की उपाधि हासिल की और मुम्बई के एलफिस्टोन (Elphinstone) कॉलेज में पढ़ाने लगे । उन्होने एलफिस्टोन में सन् १९४७-१९४९ तक ही पढ़ाने का काम किया । उसके बाद वे दो साल तक शिमला में पढ़ाने का काम किया फिर वहां त्यागपत्र देकर जांलधर में आकर देभ (DAV) कॉलेज के हिन्दी विभाग के प्रमुख बनकर अध्यापन क कार्य करने लगे । वहाँ भी सन् १९५७ में उन्होंने त्यागपत्र देकर कुछ दिनों तक दिल्ली में स्वतन्त्र लेखन का काम किया । इसके बाद सन् १९६२-१९६३ तक टाइम्स समुख की 'सारिका' पत्रिका के पहले सम्पादक बने ।

अन्य जगहों की व्यवस्था की तरह वहाँ की व्यवस्था रास नहीं आई और इस्तीफा देकर तब से जीवन पर्यन्त स्वतन्त्र लेखन का काम किया ।

राकेश जी की पहली शादी सन् १९५० में परिवारद्धारा हुआ । वह शादी सफल हो नहीं सकी और सन् १९५७ में उनका सम्बन्ध विच्छेद हो गया । इसके बाद उन्होंने सन् १९६० में अपने एक दोस्त की बहन से शादी की, जिसे वे दो वार ही मिलेथे । यह शादी भी सफल हो नहीं पाई और कुछ ही समय में ही टुट गई । इस प्रकार इनकी दो सादियाँ सफल नहीं रहीं इसलिए राकेश जी ने तीसरी बार शादी अनीता औलख जी से सन् १९६३ में की ।

मोहन राकेश अनीता की प्रेम कहानी

स्वभाव से मोहन राकेश शुरू से ही फक्कड़ थे. जब वो अपनी पहली शादी के लिए इलाहाबाद पहुंचे थे तो उनके साथ कोई बारात नहीं थी । लगभग यही उन्होंने अपनी दूसरी शादी के वक्त भी किया था । न किसी को ख़बर की और न ही किसी को बुलाया. दोनों ही शादियाँ नहीं चलीं । फिर उनकी मुलाकात अनीता औलख से हुई ।

दिलचस्प बात ये थी कि अनीता की माँ चंद्रा मोहन राकेश की मुरीद थीं । वो उनको ख़त लिखा करती थीं । उन्होंने ही उनसे एक बार अनुरोध किया कि वो मुंबई से दिल्ली जाते हुए बीच में ग्वालियर रुकें । मोहन ने वो निमंत्रण स्वीकार कर लिया ।

ग्वालियर में उनके रुकने के दौरान अनीता ने महसूस किया कि मोहन की निगाहें हमेशा उनका पीछा करती थीं । अनीता बताती हैं, "एक दिन पूरा परिवार 'दिल एक मंदिर' फिल्म देखने सिनेमा हाल गया । मैं मोहन के बगल में बैठी. फ़िल्म के दौरान कितनी बार एक हत्थे पर दो बांहें टकराईं । तभी मेरा रूमाल ज़मीन पर गिर गया । मैं रुमाल उठाने के लिए झुकी तो अनजाने में ही मेरा हाथ उनके पैरों से छु गया । मैं ख़ामोश रही और उस ख़ामोशी का जवाब भी उसी तरीके की एक ख़ामोशी से दिया गया ।"

जब राकेश जी ने अनीता जी से शाादी की उस वक्त उनकी उमर २१ वर्ष की ही थी ।

वैसे राकेश जी का जीवन काफी अस्त व्यस्त रहा लेकिन उनके चेहरे पर कभी भी शिकल के चिह्न नहीँ होते । ठहाके लगाकर हसना उनकी खासियत थी । यात्रा के शौकीन राकेश ने अपनी यात्रावर वृति का पूर्ण परिचय 'आखिरी चट्टान' में देते हैं । कमलेश्वर ने इस सम्बन्ध में लिखा है – "और यही सबसे बड़ा इलजाम उस पर है कि वह टिकता नहीं । वह निहामत गैर जिम्मेदार और अनुशासनहीन व्यक्ति हैं, वह संवेगों के आवेश में काम करता है और सही काम करते-करते दनक कर गलत काम कर बैठता है और डाक बंगलों में रहने की ही जिन्दगी समझता है । ऊपर से यह सब सही लगता है । आज वह बम्बई में है, कल वह अफ्रीका में भी हो सकता है । बड़ी बेतरतीब जिन्दगी है मेरे इस दोस्त की । पर सतह से नीचे उतरते ही जबरदस्त अनुशासन दिखायी पड़ता है । वह अनुशासित है दिमाग का और सृजन का । ऊपर जिन्दगी में यह जितना असंगठित और विखरा हुआ दिखायी देता है साहित्य सृजन में उतना ही संगठित और सुव्यवस्थित है । जितने मसल-मसलकर वह सिगरेट के टुकड़े-टुकड़े जगह-जगह फेंकता है, उतने ही, करीने से वह अपने विचार और अनुभवों की सजाता है । उसके कफ कोट आस्तीन से चाहे छह अंगुल बाहर निकल रहे, पर कहानी में कलात्मक असंतुलन को कोई जगह नहीं होती और सृजन के इसी संतुलन, संवरण, संगठन और अनुशासन के लिए यह आदमी भागता है, कभी काश्मीर, कभी

डलहौजी, कभी शिमला और कभी सुनसान विरानों में । (मेरा हमदम, मेरा दोस्तः मोहन राकेश) ।"

उनका व्यक्तित्व किसी के लिए जटिल था, तो किसी के लिए खुली किताब । उन्होंने अपने जीवन के विरोधाभासीं को अपनी आत्मकथा में स्पष्ट किया है । हिन्दी साहित्य के इस वरद पुत्र का अल्पायु में ही हृदय की गति रुक जाने से ३ डिसेम्बर १९७२ को अंत हो गया ।

२.३ रचनाएँ

मोहन राकेश नाटककार ही नहीं है । वे कथाकार के रुप में भी उनकी अगल और विशिष्ट पहचान है । सन् १९५० के लगभग "नयी कहानी" बँधी का आन्दोलन चला था जिसके ध्वजा बाहक के रुप में राजेन्द्र यादव, धर्मवीर भारती व कमलेश्वर के साथ-साथ मोहन राकेश प्रमुख थे । जिसमें उन्हें 'नयी कहानी आंदोलन' का नायक माना जाता है । और साहित्य जगत में अधिकांश उन्हें उस दौर का 'महानायक' कहते हैं ।

राकेश जी ने शुरु में केवल कहानी लेखन में ही अपनी प्रतिभा का परिचय दिया, किन्तु कालान्तर में उनकी बहुमुखी प्रतिभा नाटक, उपन्यास, यात्रा संस्मरण, लेख, निबन्ध, अनुवाद और रिपोर्ताज में चमक उठी । उनके द्वारा लिखे नाटकों इस प्रकार हैं–

- आषाढ़ का एक दिन (१९६८)
- लहरों के राजहंस (१९६८)
- आधे अधुरे (१९६९)
- अण्डे के छिल्के

राकेश जी कृत लहरों के राजहंस (१९६८) में एक ऐसे कथानक का नाटकीय पुनराख्यान है जिसमें सांसारिक सुखों और आध्यात्मिक शान्ति के पारम्मरिक विरोध तथा उनके बीच खडे हुए व्यक्ति के द्वारा निर्णय लेने का अनिवार्य द्वन्द्व निहित है । इस द्वन्द्व का एक दूसरा पक्ष स्त्री और पुरुष के पारस्परिक सम्बन्धों का अन्तविरोध है । जीवन के प्रेम और प्रेम के बीच एक कृतिम और आरोपित विरोध है, जिसके कारण व्यक्ति के लिए चुनाव कठिन हो जाता है और उसे चुनाव करने की स्वतन्त्रता भी नहीं

रह जाती । चुनाव की यातना ही इस नाटक का कथा-भावना से प्रेरित इस कथानक में उलझे हुए ऐसे ही अनेक प्रश्नों का इस कृति में नये भाव-बोध के परिवेश में परीक्षण किया गया है ।

सुन्दरी के रुपपाय में बँधे हुए अनिश्चित, अस्थिर और संशयी मन वाले नन्द की यही स्थिति होनी थी की नाटक का अन्त होते-होते उसके हाथों में भिक्षापात्र होता और धर्मदीक्षा में उसके केश काट दिए जाते । लहरों पर डोलनेवाले राजहंस के समान ही नन्द का मन चंचल है । वह न तो सुन्दरी के रुपपाश से ही मुक्त हो पा रहा है और न सच्चे और निर्विकार मन से भगवान वृद्ध की ही शरण में जा पा रहा है ।

इसी प्रकार लहरों के राजहंस के कथानक को आधुनिक जीवन के भावबोध का जो संवेदन दिया गया है, वही इस ऐतिहासिक कथानक को रचनात्मकस्तर पर महत्वपूर्ण बनाता है । यह नाटक अल इन्डिया रेडियो से भी प्रसारण हुआ था । इसके पहला अंक सुंरी पर केन्द्रित जान पड़ता है । जिसमें नन्द एक लुब्ध मुग्ध, किसी घ्द तक संयोसित और संतुलनयुक्त, पति नात्र लगता है । किन्तु दूसरे अंक से नाटक स्वयं उसके अंतः संधर्ष पर केन्द्रित होने लगता है । यद्यपि अभी इस संघर्ष की रुपरेखा अस्पष्ट है । तीसरे अंक में संघर्श की आकृति तो स्पष्ट होने लगती है, पर वह किसी तीब्रता या गहराई का आयाम प्राप्त करने के बजाय अकस्मात ही नंद और सुंदरी के बीच एक प्रकार की गलतफहमी में खो जाता है । दोनों एक दूसरे के संघर्ष का व्यक्तित्वों के विस्फोट का, सामना नही करते और नंद वड़ी विचित्र सी कायरता से चुपचाप घर छोड़कर चला जाता है । उसके इस पलायन की अनिवार्यता नाटक के कार्य व्यापार में नहीं है । कुल मिलाकर, तीनो अंक अलग-अलग से लगते हैं, जिनमें सामग्रिक अन्विति नहीं अनुभव होती । मगर इस कमी का बावजूद, पहला और दूसरा अंक अत्यन्त सावधानी से गठित और अपने आप में अत्यन्त कलापूर्ण हैं । विशेषकर, दूसरे अंक में, नन्द और सुन्दरी के बीच दो अलग-अलग सतरों पर चलनेवाले पारस्परिक आकर्षण उद्धेग तथा उसके तनाव की बड़ी सूक्षमता, संवेदनशीलता और कुशलता के साथ प्रस्तुत किया गया है ।

'आधे अधूरे' राकेश जी का सामाजिक और अन्तिम उपन्यास है । इसमे आधुनिक सन्दर्भो का उल्लेख करते हुए यान्त्रिक सभ्यता के दबाव में एक नागरिक परिवार के विघटन का वर्णन है   इसमें मध्यवर्गीय परिवार के अनुशासनहीन लोगों के

जीवन की विडम्बनाओं, विसंगतियों का चित्रण दिखाया गया है । नाटककार ने इसमें दिखाना चाहा है कि आर्थिक दबाव और सामाजिक दिखावे की चक्की में पिसते इस परिवार के सदस्य हीनतावोध से ग्रसीत है, और सभी सदस्य आवारण के भी शिकार है । पत्नी अपने पति को कभी भी पूर्ण पुरुष नहीं मानती है । उसकी नजर में पति आधा अधूरा है इसलिए पूर्ण पुरुष खोज में है । फलत : वे अनेक लोगो के सम्पर्क में है । इसी आधे अधूरेपन और अजनबीपन के कारण सभी पात्र अपने जीवन की यथार्थ समस्या का चित्रण इस नाटक में है । इसलिए इसे समस्या नाटक भी कहा जा सकता है । नाटक के सभी पात्र अनिश्चित जीवन भोगी है, उनके कार्यकलाप अनिश्चित है और शूरु से अंत भी अनिश्चित है । इसलिए इसका नाम 'आधा अधूरे' सार्थक लगता है ।

यह नाटक जुलाई १९६९ में प्रकाशित होने के बाद राकेश जी ने लिखा था कि " हिन्दी में
प्रकाशित नाटकों में 'आधे अधूरे' सबसे भग्यशाली है क्यूकिं इसे सह्रना मिला और विभिन्न शहरो के रंगमंच में मंचन हुआ ।"

'आधे अधूरे' का सर्वप्रथम हिन्दुस्थान टाइम्स में र्जिक हुआ था । जिसमें जे.डी. सेथी ने इस नाटक को "हिन्दी में प्रथम आधुनिक पूर्ण नाटक" कहा था ।

इसी प्रकार निर्देशक ओम शिवपुरी के वक्तव्य में लिखते हैं–" एक निर्देशक की दृष्टि से 'आधे अधूरे' मुझें समकालीन जिन्दगी का पहला सार्थक हिन्दी नाटक लगता है । यह मौजुदा जीवन की विडंवना के कुछेक सघन विन्दुओं को रे करता है । इसके पात्र, स्थितियाँ एवं मनः स्थितियाँ यथार्थपटक तथा विश्वनीय है । इसका गठन सुदृढ़ एवं रंगोचयुक्त है । पात्रों के प्रवेश और प्रस्थान रंग-प्रभावों की दृष्टि से भली-भाँति संयोजित हैं । पूरे नाटककी अवधारण के पीछे सूक्ष्म रंग-चेतना निहित है ।"
और शिवपुरी जी यह नाटक प्रदर्शन की विशेषता में कहते है की इस प्रदर्शन की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी नाटककार और निर्देशक का पारस्परिक सहयोग । पहले पूर्वाभ्यास से ही राकेश जी साथ थे और पहले प्रदर्शन तक वे बरावर इस कलात्मक यात्रा के सहयात्री रहे । फर्नीचर में टिपाई के चुनाव से लेकर नाटक के अषिनिरुपण तक हमने साथ-साथ काम किया । अनेक वार मतभेद भी हुए, लम्बे वाद-विवाद भी । लेकिन अन्तिम रुप में जो नाट्य-परिणाम सामने आया, उसे लेकर हम दोनों ही

सहमत थे, अर्थात प्रस्तुति में ऐसा एक भी तत्व नहीं था, जिससे या तो मैं असहम होता या राकेश जी ।

इस नाटक में केवल दो ही अंक है, पहला अंक पूर्वार्द्ध और दूसरा अत्तरर्द्ध ।

'अण्डे के छिलके' नाटक संग्रह राकेश जी के निधन के बाद प्रकाशित हुआ , इस पुस्तक के एकांकी नाटक व्यंग्यपरक है । इसमें सामाजिक रुढियाँ, युद्ध, कृत्रिम अभिजात्यता और कर्मचारियों के ढोंग पर व्यंग्य किया गया है । इस प्रकार राकेश जी के कुल तीन नाटक और एक एकांकी संग्रह प्रकाशित है । प्रथम दो ऐतिहासिक नाटक और एक सामाजिक नाटक है । जिसमें 'अषाढ़ का एक दिन' उनकी प्रथम नाट्य कृति है । जिसके विषय में अग्ले अध्यायोंमें चर्चा किया गया है ।

राकेश जी केवल नाटककार ही नहीं है । सबसे पहले वे कथाकार के रुप में हिन्दी जगत के सामने आए । अध्ययन काल से ही उन्होंने कहानी लिखनी शुरु कर दी थी । जालंधर में प्राध्यापक के समय में इनकी लिखी हुई 'लडाई' कहानी इनके निधन के बाद 'सारिका' में छपी थी । सन १९४६ में उनकी 'भिक्षु' कहानी आई, जिसका प्रकाशन "सरस्वती" में हुआ । राकेश के डायरी के अनुसार यह उनकी प्रथम प्रकाशित कहानी है । उनके पांच कहानी संग्रह उपलब्ध है –

१. इन्सान के खंडहर (१९५०)

यह उनके प्रथम कहानी संग्रह है । जिसमें उन्होंने अभिजात वर्ग की कुलवुलाती आत्मा और मध्यवर्ग की घुटी हुई चेतना का वर्णन किया है । इस संग्रह की कहानियों में शोषित और श्रमिक के प्रति सहानुभूति है तो धर्माडम्बर के प्रति व्यंग्य और धनिक वर्ग के प्रति आक्रोश । जैसे कंबल, मिट्टी के रंग, वासना की छाया में ।

२. नये बादल (१९५७)

राकेश जी ने इस संग्रह की कहनियां ऐसे वातावरण में लिखी गई है, जब एक ओर विभाज तथा दूसरी और बेकारी की मार ने सबके हृदय में पीडा, निराशा भर दी थी । उसी के प्रभाव से राकेश जी के जीवन में अनिश्चितता, निराशा, पीडा भर गई और उसी का संकेत इस संग्रह की कहानियाँ में हैं । युग के

सामाजिक यथार्थ और वस्तु सत्य के संदर्भ में इन कहानियों में है । युग के सामाजिक यथार्थ और वस्तु सत्य के संदर्भ में इन कहानियों में हैं । युग के सामाजिक यथार्थ और वस्तु सत्य के संदर्भ में इन कहानियों में जीवन की बहुत तीव्र और कड़वी प्रतिक्रया है तथा बदलते हुए विश्वासों की तीव्र चेतना हैं । जैसे छोटी-सी चीज, अपरिचित, भूखे मलबे का मालिक, उसकी रोटी, नये बादल ।

३. जानवर और जानवर (१९५८)

'नये बादल' के प्रकाशन के एक वर्ष बाद 'जानवर और जानवर' कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ । इसमें आठ कहानियों को स्थान दिया गया है । ये कहानियां राकेश जी की तत्कालीन मनः स्थितियों व परिवेश को प्रस्तुत करती हैं । इनका मूल स्वर आर्थिक स्थितियों का सामना करनेवाले निम्न मध्यवर्गीय मजबूरी, याताना विवशता से जझते हुए व्यक्ति की जिजीविषा से युक्त है । आर्थिक विषमता ने भी मनुक्ष्य को किस तरह तोड़ दिया है, लाचार बना दिया है । टुटकर भी मनुष्य जीवन की विडंबनाओं से जुझता हुआ, यातनाएँ सहता हुआ भी जीवन के प्रति रुचि, ललक लिए हूए रहता है । यही इन समस्त कहानियों में दिखाया गया है । जैसे आर्द्रा, क्लेम, आखिरी सामान, परमात्मा का कुत्ता ।

४. एक और जिन्दगी (१९६१)

सन् १९६१ में प्रकाशित 'एक और जिन्दगी' कहानी संग्रह में नौ कहानियां संग्रहित है । मानवीय संबंधों की यंत्रणा झेलते हुए पात्र इन कहानियां में हैं । "इन कहानियों में समाज में रहते हुए व्यक्ति का अकेलापन प्रतिबिंबित हुआ है । ऐसा प्रतीत होता है कि स्वयं राकेश जी की यंत्रणा व अकेलापन इन कहानियों में उत्तर आया है । अगस्त १९५७ में राकेश जी विवाह बंधन से मुक्त हुए, नौकरी से त्यागपत्र दे ही चुके थे अतएवं चारों ओर से अकले थे । मानवीय रिश्ते बेमान सिद्ध हो रहे थे । इस समय जो पीड़ा व अकेलेपन का दर्द राकेश जी ने झेला उसे हर इकाई के आध्यम से परिवेश

के अनुसार मूर्तित करने का राकेश जी ने सुन्दर प्रयास किया । व्यक्ति और समाज को परस्पर विरोधी, एक दूसरे से भिन्न और आपस में टुटी हुई इकाइयाँ न मानकर यहाँ उन्हें एक ऐसी अभिन्नता में देखने का प्रयत्न है जहाँ व्यक्ति समाज की विडंबनाओं का और समाज व्यक्ति की यंत्रणाओं का आईना है ।" जैसे मिस पाल, सुहागिने, एक और जिन्दगी, आदमी और दीवार ।

५. फौलाद का आकाश (१९६६)

फैलाद का आकाश में नौ कहानी का संग्रह है । इन कहानियों के संबंध में कई परिवर्तन हूए है । इस संग्रह से पूर्व राकेश जी की कहानियों में निश्चित थीम और कथानक होता था, परिवेश व पात्र से साक्षात्कार होता था किन्तु बाद वाली कहानियों में यह सब गोण हो गया व इसके विपरीत अनुभव प्रधान हो गया । इन कहानियाँ के प्रति राकेश जी अपने विचार प्रस्तुत करते हुए लिखा है, इन संग्रह की दो-तीन कहानियाँ को छोड़कर प्रायः सभी में बड़ी आषादी वाले शहरों की जिन्दगी उसकी भयावहता को चित्रित किया गया हैं । हालांकि भयावहता के संकेत इन कहानियों में व्यक्ति के माध्यम से ही सामने आते हैं । फिर भी उनका केन्द्र व्यक्ति न होकर उसके चारों ओर का संत्रास है । जसै सोया हुआ शहर, जंगल, चौगान, एक ठहरा हुआ चाकू आदि ।

उपरोक्त कहानी संग्रहों में संकलित कहानियाँ को राकेश जी ने पुनः चार जिल्दो में बाँधने का कार्य भी तत्परता के साथ किया था । इन चार जिल्दों के नाम इस प्रकार है ।

१) आज के साये

२) रोयें रेशे

३) एक-एक दुनिया

४) मिले-जुले चेहरे

इन संग्रहों में समाहित कहानियाँ प्रायः वे ही हैं जो पहले पाँच संग्रहों में संकलित है । इनमें कुछ नई कहानियाँ भी सामिल की हैं । कदाचित इस दृष्टिकोण के

पीछे यह भूमिका रही हो कि अलग स्थितियों एवम् संदर्भों की कहानियाँ को अलग-अलग संग्रहों में देकर एक प्रकार से उन कहानियों में व्यक्त मनोभावों को समग्ररुप से सपस्थित किया जा सके ।

इन्हीं कहानियों को राकेश जी ने तीन संग्रहों में समाहित किया है । 'क्यार्टर' में १५ कहानियाँ, 'पहचान' में १९ और 'वारिस' २० कहानियाँ हैं । उनके 'पहचान' में व्यक्त कुछ मंतव्यों से यह बात ध्यान में आती है कि वे अपनी कहानियों को एक 'सेट' के रुप में प्रस्तुत करना चाहते थे । कमलेश्वर जी जे उनकी अन्य अप्रकाशित कहानियों को उनकी डायरियों में से ढुढ़ निकाला जो सारिका के मोहन राकेश 'स्मृति विशेषांक' में प्रकाशित है । जिनकी संख्या नौ है ।

बनिया बेनाम इश्क, भिक्षु, लडाई, कटी हुई पतंगें, गुमशुदा, लेकिन इस तरह, पम्प, अर्धविराम और नन्हीं । इस प्रकार राकेश जी की कुल ६३ काहानियाँ हैं ।

राकेश जी की प्रारंभिक कहानियों में उनके तत्कालीन परिवेश और प्रतिक्रियावादी मानस की अनुभूतियों का प्रतिफल है और निरन्तर विकसित और परिवर्धित होते आ रहे भारतीय जीवन की झलक है । राकेश जी के सभी कहानियों में से 'एक औ जिन्दगी' कहानी को नयी कहानी में सर्व श्रेष्ठ माना गया है ।

कथाकार की तरह ही मोहन राकेश का उपन्यासकार रुप भी सजग और यथार्थवादी रहा । इनका प्रथम उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरे' 'न आने वाला कल' और उनकी अंतिम प्रकाशित उपन्यास 'अंतराल' है ।

१. अंधेरे बन्द कमरे

यह उपन्यास सन् १९६१ में प्रकाशित हुआ था । इसमें उस वक्त का भारतीय समाज का अभिजातवर्गीय नागर मन दो हिस्सों में विभाजित है-एक में पश्चिमी आधुनिकतावाद और दूसरें में वंशानुक्रम संस्कारवाद । इससे इस वर्ग के भीतर जो द्वद्ध पैदा होता है, उसमे पूर्वता के बीच रिक्तता, स्वच्छंदता के बीच अवरोध और प्रकाश के बीच अंधकार आ खड़ा होता है । परिणामतः व्यक्ति ऊबने-लगता है, भीतर-ही-भीतर क्रोध, ईर्ष्या और संदेह जकड़ लेते हैं । उसे जैसे वह अपने ही लिए अजनबी हो । उठता है वह, और तब इसें हम हरबंस की शक्ल में पहचानते हैं । हरबंस, इस उपन्यास का केन्द्रिय मात्र है

जो दाम्पत्य संबंधों की तलाश में भटक रहा है । हरबंस और नीलिमा के माध्यम से पारस्परिक ईमानदारी, भावनात्मक लगाव और मानसिक समदृष्टि से रिक्त दांपत्य जीवन का यहाँ प्रभावशाली चित्रण हुआ है । अपनी पहचान के लिए पहचानहीन होते जा रहे भारतीय अभिजातवर्ग की भौतिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक महत्वकांक्षाओं के अँधेरे बंद, कमरों को खोलनेवाले यह उपन्यस हिन्दी की गिनी-चुनी कथाकृतियों में से एक है ।

२. न आने वाला कल

यह उपन्यास का दूसरा संस्करण सन् १९७० में राजपाल एण्ड सन्ज द्वारा प्रकाशित हुआ । मूलतः राकेश जी ने उपन्यास बहुत कम लिखे हैं परंतु वे बहुत ही लोकप्रिय हुए हैं । यह उनकी उपन्यास में आधुनिक तेजी से बदलते जीवन तथा व्यक्ति और उनकी प्रतिक्रियाओं पर बहुत प्रसिद्ध उपन्यास है जो आर्थिक संधर्ष, स्त्री-पुरुष संबंध तथा साहित्य और कला की दुनिया को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रित करता है । यह न केवल समाज में फैली अनैतिकता को अभिव्यक्ति देता है बल्कि उसको झेलते व्यक्ति की त्रासदी का भी मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करता हैं । घटना और अनुभूति का इतना उत्तम संगम अन्यत्र उपलब्ध नहीं है ।

राकेश जी की यह उपन्यास 'एक कथा - प्रयोगः एक निर्णय की अनेक प्रतिक्रियांए' पर आधारित है । एक साधारण सी घटना-स्कूल के एक मास्टर का त्यागपत्र । बस इतने से ही हर चौहदी के अन्दर एक खलबली-सी मच गई । हर आदमी अपनी जगह परेशान हो उठा कि जिस खतरे से वह वचना चाहता था, वह शायद अब बिलकुल सामने ही है ।

३. अन्तराल

'अन्तराल' ऐसी रचना है जिसमें सामाजिक सम्बन्धों के बुनियादी तनाव के विवरण के साथ ही दुहरे समर्पण की उस मूलभूत समस्या का भी रुपाकंन है जो आज के मनुष्य के मानसिक द्वन्द्व की मूल भूमिका बना हुआ है

। इस तरह कुछ सम्बन्ध ऐसे भी होते हैं जिन्हे नाम नहीं दिया जा सकता । परन्तु ये नामहीन सम्बन्ध कई बार अन्य सम्बन्धों की अपेक्षा कहीं सूक्ष्म और गहरे होते है । अन्तराल एक स्त्री और एक पुरुष के बीच के ऐसे ही सम्बन्ध की कहानी है । दोनों की पारस्परिक अपेक्षा शारीरिक और मानसिक अपेक्षाओं के रास्ते से गुजरती हुई भी वास्तव में एक और ही अपेक्षा है । एक-दुसरे के होने मात्र से पूरी हो सकनेवाली अपेक्षा । हालाँकि इस वास्तविकता की पहचान स्वयं उन्हें भी नहीं है , दोनों के जीवन में दो रिक्त कोष्ठ हैं । श्यामा के जीवन में उसके पति का और कुमार के जीवन में एक दुबली पीली-सी लड़की का जिसके साथ कभी उसने घर बसाने की बात सोची थी । इन रिक्त कोष्ठों की माँग ही उन्हें इस सम्बन्ध की स्वाभाविकता को स्वीकार नहीं करने देती । वे एक-दुसरे के लिंए जो कुछ हैं, उसके अतिरिक्त कुछ और हो सकने की व्याकुलता ही उनके बीच का 'अन्तराल' आज की भाषा में लिखी गई आज के मानव-सम्बन्धो की एक आन्तरिक कहानी है । पहली बार आज की संशिलष्ट मनस्थितियों को इतना अनायस शिल्प मिल सका है । इस दृष्टि से यह उपन्यास लेखक की उत्तम उपलब्धियों में से है ।

इसी प्रकार बहु प्रतिभा-शाली राकेश जी ने निबन्ध साहित्य, यात्रा वृतान्त, डायरी लिखने के साथ ही अनुवाद भी किया है । जो इस प्रकार हैं–

निबंध संग्रह :- परिवेश

अनुवाद :- मृच्छकटिकम्, शांकुतलम्

डायरी :- मोहन राकेश की डायरी

यात्रा वृतांत :- आखिरी चहान तक

संम्पादन :- सारिका, नई कहानी

बाल साहित्य :- गिरगिट का सपना

इसके अलवा उनका अधुरा नाटक 'पैरो तले जमीन' सन् १९७५ में प्रकाशित हुआ । जिसको कमलेश्वर द्वारा पूरा किया गया ।

२.४ काल

मोहन गुगलानी उर्फ मदन मोहन उर्फ मोहन राकेश उर्फ राकेश जी का हिन्दीं नाटकों में भारतेन्दु हरिचन्द्र और जयशंकर प्रसाद के वाद का दौर है । जिसमें हिन्दी नाटक दुबारा रंगमंच से जुडे । हिन्दी नाट्य साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद के वाद यदि कोई लीक से हटकर नाम उभरता है तो वह मोहन राकेश का है । बीच में और भी कई नाम आते है, जिन्होंने आधुनिक हिन्दी नाटक की विकास - यात्रा में महत्वपूर्ण पड़ाव तय किए, किन्तु मोहन राकेश का लेखन एक अलग ही स्थान पर नजर आता है । इसलिए ही नहीं कि उन्होंने अच्छे नाटक लिखे, बल्कि इसलिए भी कि उन्होने हिन्दी नाटक को अँधेरे बन्द कमरों से बाहर निकाला और एक नए दौर के साथ जोड़कर दिखाया ।

उनका जन्म सन् १९२५ जनवरी ८ में जंडीवाली गली, अमृतसर (पंजाव) में हुआ था और उनका निधन सन् १९७२ दिसंबर ३ में हृदयघात से दिल्ली में हुआ था । उनका सब साहित्यिक इस २०-२३ वर्षो में ही लिखें गए । उनकी जीवन अत्यं विरोधाभासी, चौंकाने वाला तथा आकर्षक था । जीवन एवं लेखन - दोनों में ठहराव और पुनरावृत्ति से राकेश को सख्त नफरत थी । उन्हें हर पल किसी अभूतपूर्व संवेदन और उत्तेजन अनुभव की तलाश रहथी थी । वह एक नितांत असंभव और बेहद ईमानदार व्यक्ति थे । लेखन के प्रति उनकी दिलचस्पी बचपन से ही थी ।

वे प्रतिबद्ध नाटककार के साथ-साथ नई कहानी आंदोलन के प्रमुख, श्रेष्ठ उपन्यासकार, सशक्त निबंधकार-समीक्षक, और समर्थ अनुवादक भी थे । इसके अलावा छात्रों के प्रिय अध्यापक निर्भीक संपादक और एक जागरुक फिल्मकार भी थे, लेकिन नौकरी के पहले दिन ही त्याग-पत्र जेब में रखकर ले जाने बाला यह बेसब्र और बेचैन व्यक्ति कभी किसी जगह टिककर नहीं बैठ सका । तमाम दिक्कतों और परेशानियों के बावजूद केबल स्वतंत्र लेखक का चुनौतीपूर्ण जीवन हो उन्हें किसी हद एक संतोष दे सका । ३ दिसंबर, १९७२ को नई दिल्ली में अपने नए नाटक 'पैर तले की जमीन' का आलेख टाइम करते-करते राकेश ने अपने प्राण त्याग दिए ।

उनके छोटे जीवन काल में लिखा हुआ अमूल्य प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार है :

<u>नाटक</u>

- आषाढ़ का एक दिन (१९५८)

- लहरों के राजहंस (१९६८)
- आधे अधुरे (१९६९)
- पैर तले की जमीन (१९७३, कमेश्वर द्वारा पूर्ण किया नाटक)
- अण्डे के छिलके (नाटक संग्रह

<u>कहानी संग्रह</u>

- इन्सान के खंड्हर (१९५०)
- नये बादल (१९५७)
- जानवर और जानवर (१९५८)
- एक और जिन्दगी (१९६१)
- फौलाद का आकाश (१९६६)

<u>उपन्यास</u>

- अंधेरे बंद कमरे
- अन्तराल
- न आने वाला कल

<u>निबन्ध संग्रह</u>

- परिवेश

<u>अनुवाद</u>

- मृच्छकटिकम्
- शकुंतलम्

यात्रा वृत्तांत

- आखिरी चट्टान तक

डायरी

- मोहन राकेश की डायरी

संपादन

- सारिका
- नई कहानी

पुरस्कार एवं सम्मान

- संगीत नाटक अकादमी द्धारा 'आषाढ का एक दिन' पर सर्वश्रेष्ठ नाटक का पुरस्कार (१९५९)
- संगीत नाटक अकादमी द्धारा सर्वश्रेष्ठ नाटककार का पुरस्कार (१९७०)
- नेहरु फैलो शिप
- फिल्म सैंसार बोर्ड की सदस्यता
- राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय समिति की सदस्यता
- फिल्म-वित्त-निगम का निर्देशकत्व
- संगीत कला मन्दिर, कलकत्ता द्धारा 'आधे अधुरे' को सर्वश्रेष्ठ भारतीय नाटक पुरस्कार

राकेश जी ने हिन्दी नाटक को नई ज़मीन पर खड़ा कर दिया जो उन्होंने स्वयं ने ज़मीन तलाशी थी । उनके पूर्ववर्ती प्रयोगधर्मी नाटयकारों– लक्ष्मीनारायण, जगदीशचन्द्र माधर, उपेन्द्रनाथ लाल, धर्मवीर भारती आदि ने जिसे विश्वासनीय चेतना को अग्रसर किया था, उसका विकास क्रम राकेश जी में देखा सकता है और जिन्हें आधुनिक भाव वोध का नाम भी दे सकते है । इसमें हमने यथार्थवाद,

प्रकृतिवाद, प्रतीकवाद, अभिव्यक्तिवाद, एपिक थियेटर या अतियथार्थवाद, या असंगतवाद आदि अनेक मत-मतान्तरों में देखा है ।

इस प्रकार समकालीन भारतीय नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि आधुनिक हिन्दी साहित्य में भी उनका कृतित्व अलग और विशिष्ट स्थान का अधिकारी है ।

तृतीय अध्याय

३.१ आषाढ़ का एक दिन : कथावस्तु

मोहन राकेश रचित हिन्दी का प्रसिद्ध यथार्थवादी नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' सन १९५८ में प्रकाशित हुआ । यह एक त्रिखंडीय नाटक है । इसे हिन्दी नाटक के आधुनिक युग का प्रथम नाटक भी कहा जाता है । हिन्दी नाट्य जगत् और रंग जगत् की सारी जड़ता और प्रचलित रुढ़ियों को तोड़ने वाला यह राकेश जी की 'भारतीयता' और 'आधुनिकता' हमारें अपने परिवेश में से ही समस्याओं से उत्पन्न द्वन्द्व को खोज निकालने की आकुलता को प्रत्यक्ष सामने लाती है ।

'आषाढ़ का एक दिन' महाकवि कालिदास के निजी जीवन पर आधारित है, जो १०० ई.पू. से ५०० ई.पू. के अनुमानित काल में व्यतीत हुआ । इस नाटक का शीर्षक कालिदास की कृति मेघदूतम् की शुरुआती पंक्तियों से लिया गया है क्योंकि आषाढ़ का महीना उत्तर भारत में वर्षा ऋृतु का आरंभिक महीना होता है, इसलिए शीर्षक का अर्थ "वर्षा ऋृतु का एक दिन" भी लिया जा सकता है ।

मोहन राकेश जी ने लिखा कि "मेघदूत पढ़ते हुए मुझे लगा करता था कि वह कहानी निर्वासित यक्ष की उतनी नहीं है, जितनी स्वयं अपनी आत्मा से निर्वासित उस कवि की, जिसने अपनी ही एक अपराध अनुभूति को इस परिकल्पना में ढाल दिया है ।" मोहन राकेश ने कालिदास की इसी निहित अपराध अनुभूति को "आषाढ़ का एक दिन" का आधार बनाया ।

इसी प्रकार इस नाटक में स्पष्ट किया है कि भावनात्मक प्रेम का आश्रय लेकर मनुष्य जीवन के यर्थाथ से अलग नहीं हो सकता । संसार में मनुष्य का जीवन केवल भावना के सहारे नहीं चल सकता । भौतिक आवश्यकता के कारण उसे यर्थाथ के धरातल पर आना ही पड़ता है ।

वस्तुतः मोहन राकेश के नाटक केवल हिन्दी के नाटक नहीं हैं । वे हिन्दी में लिखे अवश्य गए हैं, किन्तु वे समकालीन भारतीय नाट्य प्रवृत्तियों के उद्योतक हैं । उन्होंने हिन्दी नाटक को पहली बार अखिल भारतीय स्तर ही नहीं प्रदान किया वरन् उसके सदियों के अलग अलग प्रवाह को विश्व नाटक की एक सामान्य धारा की ओर भी अग्रसर किया । जिसमे "आषाढ़ का एक दिन" विशेष है और इसिलिए सन् १९५९

में इसे वर्ष का सर्वश्रेष्ठ नाटक होने के लिए संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

अंक एक

प्रथम अंक के आरंभ में पर्दा उठते ही बादलों की गर्जन और बारिश का स्वर सुनाई देता है। मंच पर एक साधारण ग्रामीण घर प्रकोष्ठ दिखता है। दीवारें लकड़ी की हैं, परन्तु निचले भाग में चिकनी मिट्टी से पोती गई हैं। बीच(बीच में गेरू से स्वस्तिक चिह्न बने हैं। सामने का द्वार अँधेरी ड्योढ़ी में खुलता है। बायीं तरफ का द्वार खुला है जो दूसरे प्रकोष्ठ (कमरा) में जाने के लिए है। उस प्रकोष्ठ में एक तख्त पड़ा है। किवाड़ों को मिट्टी से लीपा गया है। किवाड़ पर गेरू और हल्दी से कमल फूल एवं शंख के चित्र बने हैं। दायीं तरफ के झरोखे से बिजली चमकती हुई दिखाई पड़ती है। प्रकोष्ठ में एक तरफ चूल्हा है। बगल में मिट्टी और कांसे के बर्तन संभालकर रखे हुए हैं। वहाँ तीनचार मिट्टी के कुंभ (घड़े) रखे हुए हैं जिनपर कालिख जमी हुई है।

झरोखे के पास एक लकड़ी का आसन है जिस पर बाघ छाल बिछी हुई है। चूल्हे के पास दो चौकियाँ हैं। उनमें से एक चौकी पर बैठी अंबिका छाज से धान फटक रही है। तभी वर्षा में भीगकर आई मल्लिका का प्रवेश होता है। दोनों के वार्तालाप से ज्ञात होता है कि मल्लिका अंबिका की पुत्री है। मल्लिका ने कालिदास के साथ आषाढ़ की पहली बरसात में भीगने का आनंद उठाया है इसलिए वह अपने इस सौभाग्य पर मुग्ध है। मल्लिका कालिदास से प्रेम करती है। वह कालिदास से भावनात्मक रूप से प्रेम करती है जो पवित्र, कोमल और अनश्वर है। मल्लिका के लिए बारिश का यह सौन्दर्य अस्पृश्य होते हुए भी मांसल है परंतु अंबिका को मल्लिका का यह आचरण अनुचित प्रतीत होता है। व्यक्तिगत स्तर पर भी और सामाजिक स्तर पर भी। वह कालिदास को नापसंद करती है क्योंकि वह भावनाओं में निमग्न रहने वाला एक अव्यावहारिक व्यक्ति है जिससे यह आशा करनी व्यर्थ है कि वह मल्लिका को किसी प्रकार का सांसारिक सुख दे पायेगा। सामाजिक स्तर पर वह उन दोनों से इसलिए नाराज़ है क्योंकि प्रेमी युगल का विवाह से पूर्व इस प्रकार घूमना-फिरना लोकापवाद का कारण हो सकता है।

उन दोनों के वादविवाद के बीच ही कालिदास भी आते हैं । उन्हें किसी राजपुरुष के बाण से घायल हरिण शावक के प्राण रक्षा की चिंता है । राजपुरुष दंतुल भी अपने उस शिकार को खोजते हुए वहाँ पहुँच जाते हैं । कालिदास और दन्तुल में वादविवाद होता है । कालिदास हरिणशावक को लेकर चला जाता है । दन्तुल अपने राजपुरुष होने के अभिमान में चूर है परंतु जब उसे ज्ञात होता है कि जिस व्यक्ति से वह तर्क वितर्क कर रहा था वह 'ऋतुसंहार' के प्रसिद्ध कवि कालिदास हैं तो उसका स्वर और भावभंगिमा तुरंत बदल जाती है । वह उनसे क्षमा माँगने को भी तैयार है क्योंकि सम्राट चंद्रगुप्त के आदेश पर आचार्य वररुचि उन्हीं को लेने तो वहाँ आए थे । इस सूचना से कि कालिदास को राजकीय सम्मान का अधिकारी समझा गया है मल्लिका प्रसन्न हो जाती है, परंतु अंबिका पर मानो इस सबका कोई प्रभाव ही नहीं पड़ता । दोनों एक दूसरे को अपना दृष्टिकोण समझाने का प्रयास करती हैं, तभी मातुल का आगमन होता है ।

मातुल कालिदास के संरक्षक हैं पर उनकी भाँति भावुक नहीं बल्कि अति व्यावहारिक हैं । वे राजकीय सम्मान के इस अवसर को किसी भी प्रकार खोना नहीं चाहते । कालिदास की उदासीनता से भी वे नाराज हैं । मातुल कालिदास को मुर्ख मानता है क्योंकि सम्मान ग्रहण करने से मना करने पर सम्राट क्रोधित भी हो सकते हैं । मातुल कालिदास को कुलद्रोही मानता है । अंबिका मातुल से कहती है कि वह उज्जयिनी जरूर जाएगा क्योंकि कालिदास लोकनीति में निपुण है । कालिदास जानता है कि सम्मान मिलने के बाद उसके प्रति उदासीनता प्रकट करने से व्यक्ति का महत्त्व और सम्मान ज्यादा बढ़ जाता है । निक्षेप कालिदास की मनस्स्थिति को समझता है परंतु इस अवसर को खोने के पक्ष में वह भी नहीं है इसलिए वह मल्लिका से अनुरोध करता है कि वह कालिदास को समझाये । इसी अंक में विलोम का भी प्रवेश होता है । उसकी बातों से ज्ञात होता है कि वह मल्लिका से प्रेम करता है । वह यह भी जानता है कि मल्लिका कालिदास को चाहती है और उसके जीवन में विलोम का कोई स्थान नहीं । वस्तुतः ऐसा स्वाभाविक भी है क्योंकि उसका व्यक्तित्व कालिदास के व्यक्तित्व से नितान्त विपरीत है । कालिदास के इस सम्मान से वह थोड़ा दुखी दिखाई देता है जिसकी अभिव्यक्ति उसके व्यंग्यपूर्ण कटाक्षों से होती है । उसके कारण कई हैं । एक उसके मन का ईर्ष्या भाव है । कालिदास को वह अपने प्रतिद्वंद्वी की भाँति ग्रहण

करता है और उसे लगता है कि इस प्रतिद्वंद्विता में कालिदास का स्थान उससे ऊपर हो गया है । दो, वह कालिदास और मल्लिका के पारस्परिक स्नेह भाव को भलीभाँति समझता है । वह जानता है कि कालिदास के चले जाने से मल्लिका दुखी हो जायेगी और मल्लिका का दुख उसे असहाय है । तीन, उसे आशंका है कि उज्जयिनी का नागरिक वातावरण, राज्य सत्ता की सुख सुविधाएँ, आमोद प्रमोद में कालिदास जैसा व्यक्तित्व कहीं खो न जाए, उसकी रचनाशीलता को कोई क्षति न पहुँचे, विलोम के मन में जो शंका है वही कालिदास के मन में भी है । उज्जयिनी जाने न जाने की दुविधा का कारण यही शंका है । परंतु मल्लिका के मन में इस प्रकार की कोई शंका नहीं । उसे कालिदास की प्रतिभा पर विश्वास है । यहाँ रोक कर वह उसे स्थानीय कवि नहीं बने रहने देना चाहती । उज्जयिनी जाकर उसके अनुभवों में विस्तार हो, राजकीय सुख सुविधाओं के बीच अपने अभावों को भूल कर साहित्य(रचना में वह लीन हो जाए, उसकी कीर्ति दूर दूर तक फैले भले ही इसके लिए उसे कालिदास का वियोग क्यों न सहना पड़े, इसी अभिलाषा से वह कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए मना लेती है ।

अंक दो

दूसरा अंक कालिदास के जाने से कुछ वर्षों के बाद का है । प्रकोष्ठ (कमरा) वही है लेकिन स्थिति में काफी अंतर आ गया है । दीवार की लिपाई कई स्थानों से उखड़ रही है । गेरू से बने स्वस्तिक, शंख और कमल अब फीके पड़ चुके हैं । चूल्हे के पास पहले से बहुत कम बरतन बचे हैं । कुम्भ (घड़ा) अब केवल दो ही बचे हैं और उन पर ऊपर तक काई जम चुकी है । रस्सी पर फटे पुराने वस्त्र सूखने के लिए फैलाए गए हैं । अंबिका अस्वस्थ है । उसे दो वर्ष से ज्वर है । वह दवा भी ठीक से नहीं लेती है । मल्लिका को आर्थिक अभावों की पूर्ति के लिए काम करना पड़ रहा है । मल्लिका और निक्षेप के वार्तालाप से यह स्पष्ट होता है कि वह आज भी कालिदास से उसी प्रकार जुड़ी है । राजधानी से आने जाने वाले व्यवसायियों के माध्यम से वह उनकी रचनाओं को मँगवाकर पढ़ती रही है । उसे यह संतोष भी है कि उसके स्नेह और आग्रह के कारण ही कालिदास राजधानी जाने के लिए तैयार हुए थे । अतस् वह कालिदास की उपलब्धि में कहीं स्वयं भी भागीदार हैं । निक्षेप से बातचीत से ही इस बात की भी सूचना दी गयी है कि कालिदास अब पहले वाले कालिदास नहीं रहे गये

हैं । वहाँ के वातावरण के अनुरूप अब वे सुरा और सुंदरी में मग्न रहने लगे हैं, गुप्त साम्राज्य की विदुषी राजकुमारी (प्रियंगुमंजरी) से उन्होंने विवाह कर लिया है, अब काश्मीर का शासन भार भी वे सँभालने वाले हैं और इसी यात्रा के बीच वे अपने इस ग्राम प्रांतर में भी कुछ समय के लिये रुकेंगे, उनका नया नाम अब मातृगुप्त है, 'ऋतु संहार के बाद वे और भी अनेक काव्यों नाटकों की रचना कर चुके हैं, सारा गाँव आज उनके स्वागत की तैयारी कर रहा है । तभी राजसी वेशभूषा में एक घुड़सवार के दर्शन निक्षेप को होते हैं । उसे विश्वास है कि वह राजपुरुष और कोई नहीं बल्कि स्वयं कालिदास ही हैं । यह सूचना मल्लिका को विचलित कर देती है । तभी रंगिणी संगिणी का प्रवेश होता है । ये दोनों नागरिकाएँ कालिदास के परिवेश पर शोध करना चाहती हैं परंतु उनका काम करने का ढंग अत्यंत हास्यास्पद और सतही है । वे मल्लिका से उस प्रदेश की वनस्पतियों, पशु पक्षियों, दैनिक जीवन मे उपयोग में आने वाली वस्तुओं और विशिष्ट अभिव्यक्तियों के विषय में प्रश्न करती हैं । परंतु कुछ भी असाधारण न दिखाई देने से निराश हो कर लौट जाती हैं । उनके जाते ही अनुस्वार और अनुनासिक नामक दो राज कर्मचारी आते हैं । कालिदास की पत्नी और राजपुत्री प्रियंगुमंजरी के आगमन की तैयारी में वे मल्लिका के घर की व्यवस्था में कुछ ऐसा परिवर्तन करना चाहते हैं जो राजकुमारी के गौरव के अनुरूप हो और सुविधाजनक भी हो । परन्तु वास्तव में वे व्यवस्था परिवर्तन का नाटक भर करते हैं और बिना कोई बदलाव किये वहाँ से चले जाते हैं । फिर मातुल के साथ प्रियगुमंजरी का आगमन होता है । वह जानती है कि मल्लिका कालिदास की प्रेयसी है और कालिदास के मन में उसके लिए अथाह स्नेह और सम्मान है । उसे मालूम है कि कालिदास की समस्त रचनाओं की प्रेरणा स्रोत मल्लिका और यह परिवेश ही है । अतः स्त्री सुलभ जिज्ञासा और ईर्ष्या के फलस्वरूप वह इस प्रदेश में आने और मल्लिका को देखने का लोभ संवरण नहीं कर पाती है । उसे आश्चर्य होता है कि राजधानी से इतनी दूर होने पर भी मल्लिका ने कालिदास की सभी रचनाएँ प्राप्त कर ली हैं और पढ़ भी ली हैं । अब कालिदास को मातृगुप्त के नाम से जाना जाता है अतः मल्लिका का कालिदास संबोधन उसे आपत्तिजनक लगता है । वह मल्लिका के घर का परिसंस्कार करना चाहती है और उसकी इच्छा है कि मल्लिका किसी राजकर्मचारी से विवाह कर ले, उसके साथ उसकी संगिनी बन कर रहे । वहाँ की वनस्पतियों, पत्थरों, कुछ पशु

पक्षियों ओर कुछ गरीब बच्चों को अपने साथ ले जाना चाहती है जिससे कालिदास को राजसुख में रहते हुए भी कभी अपने परिवेश का वियोग न खटके मल्लिका घर के परिसंस्कार और विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है । प्रियगुमंजरी का वियोग न खटके । मल्लिका घर के परिसंस्कार और विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है । प्रियगुमंजरी हतप्रभ सी होकर वहाँ से चली जाती है । उसके जाने के बाद विलोम भी आता है । इस सारे घटनाचक्र से वह भी परिचित है । वह इस आशा से वहाँ आता है कि कालिदास यदि वहाँ आये तो वह उसकी वास्तविकता, उसके व्यक्तित्व में आये परिवर्तन को सबके सम्मुख उजागर कर दे । यद्यपि वह जानता है कि कालिदास वहाँ नहीं आएगा । कालिदास के मल्लिका से बिना मिले चले जाने से अंबिका और विलोम दोनों की आशंकाएँ सत्य सिद्ध होती हैं ।

अंक तीन

तीसरे अंक में कुछ और वर्षों के बाद की घटनाएँ हैं । परदा उठने पर वर्षा और मेघ गर्जन की आवाज़ आती है । वही प्रकोष्ठ (कमरा) जहाँ एक दीपक जल रहा है । प्रकोष्ठ की हालत बिल्कुल जर्जर और अस्त-व्यस्त हो चुकी है । अब वहाँ केवल एक ही कुंभ (घड़ा) है और वह भी टूटी फूटी अवस्था में है । दीवारों पर से स्वस्तिक, शंख आदि के चिह्न मिट चुके हैं । चूल्हे के पास सिर्फ दो एक बरतन शेष हैं । इस बार अंबिका दिखाई नहीं देती । वहाँ पालने में लेटा एक शिशु जो मल्लिका के अभाव की संतान है । घर की अस्त व्यस्त और जीर्ण शीर्ण स्थिति मल्लिका के दुखों की कहानी कह रहे हैं । इस बार फिर आषाढ़ का पहला दिन है पहले की भाँति इस बार भी मूसलाधार वर्षा हो रही है । परंतु इस मल्लिका वर्षा का आनंद उठाने की स्थिति में नहीं है । मातुल भीगता हुआ आता है । जिस वैभव और सत्ता सुख की लालसा से वह उज्जयिनी गया था, वह लालसा तो पूरी हुई किंतु उस सबसे मातुल का मोह भी भंग हुआ है । मातुल को चिकने शिलाखंडों से बने प्रासाद, आगे पीछे चलते प्रतिहारी, कालिदास का संबंधी होने के नाते अकारण मिलने वाला सम्मान शुरू में तो बहुत अच्छा लगता है लेकिन धीरे धीरे इस सबसे वह ऊबने लगता है । वह मल्लिका को सूचना देता है कि कालिदास ने काश्मीर के शासन की जिम्मेदारी त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया है । मातुल के चले जाने के पश्चात इसी अंक में कालिदास का प्रवेश होता है । प्रथम अंक में जिस तेजस्वी कालिदास के दर्शन होते हैं और दूसरे अंक में

जिसकी प्रतिभा, योग्यता और यश की चर्चा होती है । वही कालिदास इस तीसरे अंक में भग्नहृदय और विवश दिखाई देते हैं । इस अंक में कालिदास का लंबा आत्मवक्तव्य है । वह बताता है कि यहाँ से जाने के बाद वह सुख सुविधाओं आमोद प्रमोद, साहित्य सृजन में व्यस्त भले ही रहा हो परंतु कभी भी अपने ग्रामप्रांतर और मल्लिका से अलग नहीं हुआ । अपने पुराने अनुभवों को ही वह बार बार अनेक रूपों में पुनः सृजित करता रहा है । उसकी मौलिकता धीरे धीरे समाप्त होने लगी । जिन लोगों ने सदा उसका तिरस्कार किया था, उपहास किया था उनसे प्रतिशोध लेने की कामना से ही उसने काश्मीर के शासन की जिम्मेदारी संभाली । परंतु अब वह इस कृतिम जीवन से थक चुका है । अतः शासक मातृगुप्त के कलेवर से संन्यास लेकर वह पुनः कालिदास के कलेवर में लौट आया है । अब वह यहीं इस पर्वत प्रदेश में ही रहना चाहता है, मल्लिका के साथ अपने जीवन को पुनः आरंभ करना चाहता है । इस बातचीत के बीच बीच में द्वार पर दस्तक होती रहती है परंतु मल्लिका द्वार नहीं खोलती । इस वक्तव्य के दौरान उसे एक बार भी यह विचार नहीं आता कि उसके उज्जयिनी जाने और वहाँ से वापिस आने की दीर्घ अवधि में मल्लिका को किन(किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा । सहसा अंदर बच्ची के रोने की आवाज और विलोम के प्रवेश से उसे वास्तविकता का ज्ञान होता है । अब उसे अनुभव होता है कि इच्छा और समय के द्वंद्व में समय अधिक शक्तिशाली सिद्ध होता है और समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता । कालिदास एक बार फिर मल्लिका को छोड़कर वहाँ से चला जाता है और यहीं नाटक समाप्त हो जाता है ।

३.२ नाटक का उद्देश्य

कथानक किसी भी नाटक का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जिसे आधार बना कर नाटककार अपना मंतव्य पाठकों तक संप्रेषित करता है । इस इकाई से विधार्थियों को आलोच्य नाटक का कथानक और उसके विन्यास को समझने में सहायता मिल सकेगी ।

नाटककार अपनी रचना के माध्यम से जो कुछ भी कहना चाहता है उसे या तो किसी कथा का आश्रय लेकर कहता है या किसी जीवन स्थिति को चुनकर उसके प्रभाव के माध्यम से अभिव्यक्त करता है । यह कथा अथवा जीवन स्थितियाँ वर्तमान जीवन

और समाज से संबंधित भी हो सकती है और इतिहास के किसी प्रसंग से भी । कथा कैसी भी हो वर्तमान की या अतीत की, महत्त्वपूर्ण यह है कि वह उसे प्रस्तुत कैसे करता है और उसका दृष्टिकोण क्या है । मोहन राकेश कृत आषाढ़ का एक दिन नामक नाटक की कथा अतीताश्रित है । उसका नायक कालिदास है, वह कालिदास जो भारतीय साहित्य का उच्चतम शिखर माने जाते हैं । परंतु कालिदास, कालिदास कैसे बने इस संबंध में इतिहास लगभग मौन है । यत्रतत्र बिखरे सूत्रों को जोड़कर और कुछ अपने अनुमान लगाकर प्रस्तुत नाटक का कथानक बनाया गया है ।

नाटक एक ऐसी विधा है जो मनुष्य और समाज के विधि पक्षों से जुड़ी है, उनके विभिन्न पहलुओं को उदघाटित करती है । इस उददेश्य की पूर्ति के लिए नाटककार को अनेक प्रकार के पात्रों का सहारा लेना पड़ता है जो अपने विशिष्ट चरित्रों, अपने कार्य कलापों, संवादों और गतिविधियों से मनुष्य और समाज के इन विभिन्न पक्षों को उभार सकें । दृश्य विधा होने के कारण पात्र योजना का महत्त्व और भी बढ़ जाता है ।

३.३ पात्र योजना

पात्र योजना और चरित्र चित्रण नाटक के अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं । यहाँ तक कि बिना पात्रों के किसी नाटक की कल्पना भी असंभव है । साहित्य की अन्य विधाओं में रचनाकार स्वयं अपने वक्तव्यों द्वारा अपने मंतव्य को स्पष्ट कर सकता है । परंतु नाटक में पात्राों के माध्यम से ही वह अपनी बात कहता है । आषाढ़ का एक दिन, नाटक के पात्रा भी नाटककार मोहन राकेश के अभिप्रेत को पाठकों तक संप्रेषित करने में समर्थ हैं ।

पात्र विश्लेषण के विभिन्न आधार और आषाढ़ का एक दिन किसी भी नाटक के पात्रों का अध्ययन विश्लेषण विभिन्न आधारों पर किया जा सकता है । पहला आधार है मुख्य पात्र और गौण पात्र । मुख्य पात्र वे होते हैं जो नाटक के नायक या नायिका होते हैं । संपूर्ण कथानक का केन्द्र बिंदु ये ही पात्र होते हैं और शास्त्रीय शब्दावली में कहें तो फल प्राप्ति का सीधा संबंध इन्ही पात्रों से होता है । जबकि गौण पात्रों की स्थिति कथानक में मुख्य पात्रों की अपेक्षा कम समय के लिए होती हैं । ये मुख्य कथा के निर्वाह में सहायता प्रदान करते हैं । इस आधार पर यदि आषाढ़ का एक दिन के पात्रों का अध्ययन करें तो स्पष्ट होता है कि कालिदास और मल्लिका इस

नाटक के मुख्य पात्र हैं और शेष सभी गौण या सहायक पात्र । कालिदास और मल्लिका ही इस नाटक के कथा केन्द्र हैं । प्रथम अंक में कालिदास और मल्लिका के परस्पर प्रेम के संकेत हैं, मल्लिका कालिदास की अद्वितीय काव्य प्रतिभा से सम्मोहित है, और इसी अंक में कालिदास को राजकवि का सम्मान स्वीकार करने का निमंत्रण स्वीकार कर लेता है । द्वितीय अंक में कालिदास की शारीरिक उपस्थिति नहीं है, परंतु उसकी छाया उस पूरे अंक पर दिखाई देती है । इसी अंक में यह सूचना मिलती है कि उसने 'ऋतुसंहार के बाद और बहुत सी रचनाएँ की हैं और उनके बहुत से नाटकों का मंचन भी हो चुका है, कि उसने राजपुत्री प्रियंगुमंजरी से विवाह कर लिया है, कि उसने अब काश्मीर का राज्यभार सँभाल लिया है और अब उसका नया नाम मातृगुप्त हो गया है, कि उसने अब स्वयं को नागरिक आचार विचार के अनुसार ढाल लिया है, कि वह अपने इस ग्राम प्रांतर में अल्पावधि के लिए रुका हुआ है । रंगिनी/संगिनी, अनुस्वार/अनुनासिक तथा प्रियंगुमंजरी की उपस्थिति का कारण भी कालिदास ही है । इन सभी स्थितियों से मल्लिका का चरित्र और भी सक्षम रूप में हमारे सामने खुलता है । उसकी कोमलता, भावप्रवणता, एकनिष्ठ प्रेम, संयम और इच्छा शक्ति पाठकों को प्रभावित किये बिना नहीं रहती । तृतीय अंक में कालिदास का पुनः प्रवेश होता है और कालिदास तथा मल्लिका अनेक वर्षों बाद एक दूसरे के आमने सामने होते हैं । इस अंक में मल्लिका के आत्मकथन से उसके संघर्षों और पीड़ा का ज्ञान पाठकों को होता है । कालिदास का लंबा व्यक्तव्य उसकी मानसिकता, विवशता और मल्लिका के साथ एक नये जीवन के आरंभ की चाह को स्पष्ट करता है । यधपि कालिदास और मल्लिका का पुनर्मिलन नहीं हो पाता और नायक या नायिका 'फलागम से वंचित रह जाते हैं । नाटककार का यह उददेश्य था भी नहीं । शेष पात्रों को यदि गौण पात्र मानें तो वह भी ठीक नहीं । अंबिका और विलोम अपने आचरण व दृष्टिकोण से कालिदास और मल्लिका के मुकाबले कम प्रभावशाली नहीं हैं । अंबिका एक प्रकार से मल्लिका की प्रतिकृति है और विलोम कालिदास का । ये दोनों ही पात्रा जब भी मंच पर आते हैं अपनी उपस्थिति से दर्शकों को झकझोर देते हैं ।इसी प्रकार मातुल, निक्षेप, रंगिनी संगिनी, अनुस्वार अनुनासिक, प्रियंगुमंजरी की उपस्थिति अपेक्षाकृत कम समय के लिये है परंतु कालिदास और मल्लिका के व्यक्तित्व को विभिन्न कोणों से देखने परखने में और नाटककार के अभीष्ट को पाठकों तक संप्रेषित करने में वे

सहायक भूमिकाएँ निबाहते हैं । इन्हें भी गौण पात्र कहने की अपेक्षा सहायक पात्र कहना अधिक संगत होगा ।

पात्रों के वर्गीकरण का एक और आधार है प्रतिनिधि पात्र और सामान्य पात्र । प्रतिनिधि पात्र किसी वर्ग, वर्ण, समुदाय अथवा किसी विचारधारा विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं जबकि सामान्य पात्र अपनी वैयक्तिक विशेषताओं से समन्वित होते हैं । प्रस्तुत नाटक में सभी पात्र किसी न किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। कालिदास आधुनिक रचनाकारों का प्रतिनिधि है जिन्हें अपनी प्रतिभा के विकास के लिए, अपनी पहचान बनाने के लिए राज्याश्रय लेना पड़ता है परंतु कलाकार और राजनीति के चरित्रगत अंतर के कारण या तो उन्हें समझौतों का मार्ग चुनना पड़ता है या अपनी दुनिया में वापिस लौट आने का । परंतु तब तक बहुत देर हो चुकी होती है । वे न घर के रहते हैं न घाट के। विलोम कालिदास जैसे भावुक और आदर्शवादी रचनाकार के एकदम विपरीत व्यावहारिक दृष्टिकोण का व्यक्ति है । अम्बिका भी व्यवहारिक जीवन पद्धति की पक्षधर चरित्र है जो जानती है कि कोरी आदर्शवादिता और भावुकता क्षणिक आनंद भले ही दे दे, जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यावहरिक जीवन दृष्टि ही अपनानी होगी। मल्लिका कालिदास की प्रकृति के अनुकूल आदर्शवादी, भावुक चरित्र है । वह आधुनिक नारी का भी प्रतिनिधित्व करती है जो स्वतंत्र दृष्टि से सोचती है और जो सही समझती है वही करती भी है। दंतुल उन राजपुरुषों की मनोवृत्ति को व्यक्त करता है जो राज्याधिकारों की आड़ में किसी के भी दुःख सुख, मान अपमान की चिंता नहीं करते । मातुल अवसरवादी, चापलूस लोगों का प्रतिनिधि है जो अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये सुख सुविधाओं की प्राप्ति के लिए अपने घर द्वार, अपने परिवेश को भी त्याग सकते हैं । उनके लिये कला, प्रतिभा आदि का मूल्य इतना ही है कि उसके माध्यम से सम्मान और सुख अर्जित किया जा सके । प्रियंगुमंजरी भी सत्ता वर्ग की प्रतिनिधि पात्र है जो कृत्रिम जीवन जीते हैं, अपने दर्प के सम्मुख दूसरों की इच्छाओं भावनाओं के सम्मान की उन्हें कोई चिंता नहीं । अनुस्वार अनुनासिक उन राज कर्मचारियों की मनोवृत्ति को दर्शाते हैं जो व्यवस्था को बदलने का दंभ करते हैं परंतु वास्तव में वे करना कुछ भी नहीं चाहते। रंगिनी संगिनी आधुनिक काल की शोध वृत्ति पर प्रकाश डालती हैं जो समस्याओं की जड़ में न जाकर उनका सतही विश्लेषण करके ही संतुष्ट हो जाती

हैं । इस पूरे नाटक मे केवल निक्षेप का चरित्र ही सामान्य चरित्र के रूप में उभरा है जो न अतिव्यावहारिक है, न अति आदर्शवादी । वही एकमात्र ऐसा चरित्र है जो कालिदास के उचित अनुचित आचरण की परीक्षा संतुलित दृष्टि से करता है ।

पात्रों के वर्गीकरण का एक अन्य आधार है उनके चरित्र की स्थिरता अथवा गतिशीलता अर्थात जो पात्र अपनी कथनी और करनी में आरंभ से लेकर अंत तक एक ही प्रकार के दिखाई देते हैं वे स्थिर पात्रा कहलाते हैं । परंतु जिनकी जीवन दृष्टि , आचरण में परिवर्तन होता रहता है वे गतिशील पात्र कहलाते हैं । 'आषाढ़ का एक दिन' में सभी पात्र स्थिर पात्रों की श्रेणी में आते हैं केवल एक पात्र मातुल के अतिरिक्त । मातुल आरंभ से ही अत्यंत अवसरवादी, स्वार्थी और चाटुकार के रूप में दिखाई देता है । अपनी इसी मनोवृत्ति के कारण वह कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए बाध्य करता है । स्वयं भी उसी के साथ राजधानी चला जाता है । दिन रात पशुओं की देखभाल करने वाले मातुल को आज उनकी सुरक्षा की कोई चिन्ता नहीं । प्रियंगुमंजरी के ग्राम में आने पर उसकी चाटुकारिता करता है । परंतु अंतिम अंक में उसके किंचित परिवर्तित रूप के दर्शन हमें होते हैं । उसे अब इस कृत्रिम जीवन से घृणा होने लगी है । कोई योग्यता न होते हुए भी कालिदास का संबंधी होने के कारण-मात्रा से उसे भी जो सम्मान मिलता है वह अब उसे बोझ लगने लगा है । अपने गाँव का सहज परिवेश ही अब उसे आकृष्ट करता है इसलिए राजप्रसाद के फिसलन भरे चिकने फर्श पर से फिसल कर टाँग तुड़ाने के बाद वह वापिस लौट आया है । परंतु मातुल के अतिरिक्त शेष सभी पात्र स्थिर दिखाई देते हैं । कालिदास आरंभ से अंत तक भावुक, कल्पनाशील, उदात्त चरित्र के रूप में दिखाई देता है जो मल्लिका से अतिशत स्नेह करता है । यधपि द्वितीय अंक में मातृगुप्त के रूप में उसके गाँव में आने और मल्लिका से न मिलने की स्थिति में ऐसा प्रतीत होता है कि वह भी समय के साथ साथ बदल गया है, उसने भी सत्ताधारी वर्ग के गुण अवगुण, जीवन पद्धति को अपना लिया है । परंतु तृतीय अंक में उसके लंबे वक्तव्य से उसकी स्थिति स्पष्ट हो जाती है । मल्लिका, अंबिका और विलोम की चरित्रगत विशेषताएँ भी आधोपान्त एक ही प्रकार की हैं ।

३.४ पात्रों की संख्या

चरित्र योजना करते समय लेखक ने पात्रों की संख्या का भी ध्यान रखा है । नाटक दृश्य विधा है इसलिए नाटककार को इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि पात्रों की संख्या इतनी कम न हो कि कथानक का विन्यास ही भली प्रकार न हो सके और लेखक का अभिप्रेत भी स्पष्ट न हो पाये, और इतनी अधिक भी न हो कि मंच पर पात्रों की भीड़ लग जाये, उनका चरित्र स्पष्ट न हो पाये और दर्शक उन्हें याद भी न रख सकें । मोहन राकेश ने 'आषाढ़ का एक दिन में मात्रा बारह पात्रों की ही योजना की है । जो इस प्रकार है :-

- अम्बिका : ग्राम की वृद्धा
- मल्लिका : उसकी पुत्री
- कालिदास : कवि
- दन्तुल : राजपुरुष
- मातुल : कवि मातुल
- निक्षेप : ग्राम-पुरुष
- विलोम : ग्राम-पुरुष
- रंगिणी : नागरी
- संगिनी : नागरी
- अनुस्वार : अधिकारी
- अनुनासिक : अधिकारी
- प्रियंगुमंजरी : अधिकारी

इनमें से कुछ तो बहुत थोड़ी ही देर के लिये मंच पर आते हैं और कुछ अधिक समय के लिये । परंतु सभी पात्रों का व्यक्तित्व उनकी चारित्रिक विशेषताएँ पाठकों क सामने उभर आई हैं ।

३.५ भाषा-शिल्प

'भाषा' शब्द की व्युत्पत्ति 'भाष' धातु से हुई है । 'भाष' का अर्थ है 'कहना' अर्थात रचनाकार अपनी रचना के माध्यम से कुछ कहना चहता है । जो कहा जा रहा

है वह तो महत्वपूर्ण है ही, जैसे कहा जा रहा है वह भी महत्वपूर्ण है। यह भाषिक क्षमता नाटक के संदर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। नाटक में वर्णन या व्याख्या के लिए कोई स्थान नहीं होता। इसलिए कथा, संवेदनाद्व पात्रों की चरित्रगत विशेषताएँ सभी भाषा के माध्यम से ही संप्रेषित होती हैं। 'आषाढ़ का एकदिन' नाटक में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग तथा भावनाओं के संगुंफन की अभिव्यक्ति के लिए लम्बे लम्बे वाक्यों का भी प्रयोग हुआ है। परन्तु जहाँ सरल भावों का स्पंदन है वहाँ छोटे छोटे वाक्यों का ही चयन किया गया है। भाषा में वर्षा, बिजली का कौंधना और कड़कना, भीगना ये सभी बिंब भाषा की भावों को अभिव्यक्त करने के लिए प्रतीकार्थ के रूप में आए हैं। भाषा दुधारी तलवार से काट कर अतीत से जोड़ती है तो दूसरी ओर नई संवदेनाओं और कथ्य के आधार पर उसे वर्तमान से मिलाती है।। इस नाटक की भाषा में एक प्रकार का आरोपित संयम, अभिजात्य और सौष्ठव विद्यमान है, फिर भी इस नाटक की भाषा अपनी कुछ अनुगूँज छोड़ती है। उदाहरणार्थ :-"एक बाण प्राण ले सकता है, तो उँगलियों का कोमल स्पर्श प्राण दे भी सकता है। हमें नये प्राण मिल जाएँगे। हम कोमल आस्तरण पर विश्राम करेंगे। हमारे अंगो पर धृत का लेप होगा। कल हम फिर वनस्थली में घूमेंगे। कोमल दूर्वा खाएँगे।" (पृष्ठ १६)

"एक राज्याधिकारी का कार्यक्षेत्र मेरे कार्यक्षेत्र से भिन्न था। मुझे बार-बार अनुभव होता कि मैंने प्रभुता और सुविधा के मोह में पड़कर उस क्षेत्र में अनधिकार प्रवेश किया है, और जिस विशाल में मुझे रहना चाहिए था उससे दूर हट आया हूँ।" (पृ.१००)

परंतु व्यावहारिक मनोवृत्ति वाले पात्रों की भाषा में छोटे-छोटे वाक्य है। शब्द-प्रयोग भी ऐसा हैं जो उसकी व्यवहार कुशलता का आभास देता है। पात्रों के व्यतित्व के अनुसार उनकी भाषा के 'स्वर (टोन)' मे भी बदलाव आ जाता है। उदाहरणार्थ दंतुल का निम्नांकित कथन उसके दंभ को प्रकट करता है।

"दन्तुल : समझदार व्यक्ति जान पड़ते हो। फिर भी यह नहीं जानते हो कि राजपुरुषों के अधिकार बहुत दूर तक जाते हैं।" (पृष्ठ २०)

इस कथन में उसका राजपुरुष होने का अभिमान तो झलकता ही है साथ ही धमकी भी है।

इस प्रकार का मिथ्याभिमान प्रियंगुमंजरी, रंगिणी-संगिनी, और अनुस्वार-अनुनासिक का वार्तालाप विशेष रुप से उल्लेखनीय है जिसमें व्यवस्था को बदल सकने का दर्प भी है और बिना कुछ किये कर दिखा कर राजकोष का लाभ उठाने और सरकारी कर्मचारियों की 'मक्खी पर मक्खी' बिठाने की प्रतित का बोध भी होता है –

"अनुस्वार : ये वस्त्र ?

अनुनासिक : वस्त्र अभी गीले हैं, इसलिए इन्हें नहीं हटाना चाहिए ।

अनुस्वार : क्यों ?

अनुनासिक : शास्त्रीय प्रमाण ऐसा है ?

अनुस्वार : कौन-सा प्रमाण है ?

अनुनासिक : यह तो मुझे याद नहीं ।

अनुस्वार : यह याद है कि ऐसा प्रमाण है ?

अनुनासिक : हाँ ।

अनुस्वार : तो ?

अनुनासिक : तो संदिग्ध विषय है ।

अनुस्वार : हाँ, तब तो अवश्य संदिग्ध विषय है ।

अनुनासिक : संदिग्ध विषय होने से वस्त्रों को भी रहने दिया जाए ।" (पृष्ठ ६३)

विलोम के संवादों से उसकी व्यावहारिक बुद्धि का बोध तो होता ही है साथ ही मल्लिका के प्रति उसका स्नेह-भाव और कालिदास के प्रति ईष्या का भाव भी प्रकट होता है ।

'आषाढ का एक दिन' नाटक अपने बिंबों और प्रतिकों के लिये भी चर्चा का विषय रहा है । ये बिंब अधिकांशत : रुप और शब्द से संबन्धित हैं । बादलों के गरजने की आवाज़ और बिजली कौधनें के आभास से वर्षा के संकेत दिये गये हैं । आषाढ़ की प्रथम वर्षा में भीगी मलिलका मुग्ध भाव उसकी भावुकता और अंतस में पनप रहे प्रेमभाव का धोतक है । अंबिका का जोर-जोर से धान फटकना उसकी नाराजगी को तो प्रकट करता ही है साथ ही उसके मन में छिपी मल्लिका के भविष्य की चिंता भी स्पष्ट होती है । विभिन्न पात्रों के स्वर का विशिष्ट टोन उनके व्यक्तित्व और मूड को प्रतिबिंबित करता है । वर्षा इस नाटक का केंद्रीय प्रतीक है । नाटक का आरंभ भी वर्षा से ही होता है और अंत भी । हालाँकि दोनों बार की वर्षा में वषो का अन्तराल है ।

पहल वर्षा के समय उलासमयी-अनुरागमयी **मल्लिका** और कोमल किंतु द्रढ़ व्यक्तित्व वाले कालिदास के दर्शन होते हैं परंतु बाद की वर्षा में दोनों के ही व्यक्तित्व और जीवन में आये परिवर्तन को समझा जा सकता है । कालिदास के प्रति **मल्लिका** का अनुराग आज भी वैसा ही है परंतु परिस्थितियों ने उसे समझौता करना भी सिखाया है । इसीलिए वह वीरांगना के रुप में दिखाई देती है ठीक इसी प्रकार कालिदास के मन में भी **मल्लिका** के प्रति आत्मीयता का भाव पूर्ववतहै जिसके साथ वह पुनः जीवन का आरंभ करना चाहता है, परंतु उसके चरित्रा की जो द्रढ़ता-तेजसिवता आरंभ में दिखाई दी थी वह अब लुप्त हो गयी है । **मल्लिका** के जीवन की शोचनीय दशा के लिये वह स्वयं को अपराधी मान रहा है । इस प्रकार वर्षा का प्रयोग केंद्रीय प्रतीक के रुप में कर मोहन राकेश ने नायक और नायिका की भिन्न-भिन्न मनः स्थितियों को अभिव्यक्ति प्रदान की है । इस प्रतीकात्मकता का निर्वाह पात्रों के नामकरण के संदर्भ में भी किया गया है । अम्बिका-मल्लिका की माँ है, मातुल, कालिदासका मामा । विलोम का व्यक्तित्व कालिदास के विपरीत है रंगिणी-संगिनी जीवन का अध्ययन उसके सतह के आधार पर करती है, सतह को भेद कर उसके मूल तक जाने की न तो आवश्यकता अनुभव करती है, न ही उनमें इतनी क्षमता है । अनुस्वार-अनुनासिक वणो के उच्चारणों में जैसे कोई विशेष भेद नहीं है वैसे ही उनके व्यवहार और कार्यपद्धति में भी कोई अंतर नहीं है । दोनों ही व्यवस्था में परिवर्तन का ढोग करते हैं किंतु वास्तव मे कुछ भी परिवर्तन नहीं करते । इसी प्रकार दंतुल उन राजपुरुषों का प्रतीक है जो अपने पैने नख-दंतो से जनता को आहत करते हैं । सत्ता और अधिकार का मद उनके सिर चढ़ कर बोलता है । प्रियंगुमंजरी राजकन्या है जिसके व्यक्तित्व मे मंजरियों की सुगंधि व मादकता तो है जो दूसरों को प्रभावित करती है किंतु उसके व्यवहार में उस सरलता का अभाव है जो **मल्लिका** के व्यवहार में है । इसीलिए उसकी कोमलता कृत्रिम और दंभ की पर्याय प्रतीत होती है । **मल्लिका** अपने नाम के अनुरुप कोमलता, सरलता और आकर्षक व्यक्तित्व की स्वामिनी है ।

नाटय भाषा के लिए जिस शब्द-नैपुण्य और लय-संयोजन की आवश्यकता होती है उसके दर्शन हमें 'आषाढ़ का एक दिन' की भाषा में होते हैं । नाटककार की कुशलता शब्द-संचयन में नहीं बल्कि लय और ध्वनि के आधार पर उनके सर्जनात्मक प्रयोग में है । कभी उच्चारण भेद से, कभी बलाघात-भेद से शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, उनमें

नये अर्थ भर जाते हैं । पृ. ३७ पर अम्बिका और निक्षेप के मध्य कालिदास की 'विचक्षणता' से संबंधित चर्चा अथवा पृ.३७ पर कालिदास और विलोम के बीच 'छंदों' के अभ्यास की चर्चा ऐसे ही प्रसंग हैं । अन्यत्रा भी इस प्रकार के उद्धरण खोजे जा सकते हैं । डा. गिरिश रस्तोगी ने मोहन राकेश की नाटयभाषा का विश्लेषण करते हुए लिखा है । सामान्य रुप से समझना चाहें तो कह सकते हैं कि राकेश की नाटय भाषा की पहली पहचान है भाषा और शारीरिक क्रिया का, भाषा और मनः स्थिति का गहरा संबंध । समय, जीवन और दृष्टि बदलने के साथ-साथ, उसकी लय भी अपने आप बदलती जाती है । (मोहन राकेश और उनके नाटक पृष्ठ १५७) 'आषाढ़ का एक दिन' में मोहन राकेश की नाटय भाषा की ये विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं ।

३.६ आषाढ़ का एक दिन मंचीय दृष्टिकोण से कितना सफल और कितना असफल

अषाढ़ का एक दिन हिन्दी नाट्य जगत की अपनी नींव और परम्परा, संस्कार, दृष्टि से एकदम कटकर कुछ बाहरी प्रभावों की चकाचौंध में पड़कर वह जाने, लिखा हुवा नाटक नहीं है । और यह राकेश जी को कभी मान्य ही नहीं रहा और यहाँ तक कि रंगमंच के विकास के सम्बन्ध में भी वह कृत्रिमता से हटकर भिन्न ढंग से सोचते हैं । मोहन राकेश जी ने कहा है कि हिंदी रंगमंच पाश्चात्य रंगमंच से अत्यधिक भिन्न है । हमारे पास उपलब्धियों को देखने के लिए पाश्चात्य रंगमंच ही है क्योंकि हिंदी रंगमंच किसी एक विचार विशेष से बंधा हुआ नहीं है । राकेश जी ने हिंदी रंगमंच के उद्देश्य को भी परिभाषित करने की कोशिश की है । उनका कहना है कि रंगमंच को हिंदी भाषी प्रदेश की दैनिक आवश्यकताओं और उनकी सांस्कृतिक महत्ताओं को अभिव्यक्त करने वाला होना चाहिए और ऐसा पाश्चात्य रंगमंच की अंधाधुंध तरीके से नक़ल करने से संभव नहीं है । और लेखक की इस बात के लिए सराहना होनी चाहिए कि इस भाव की अभिव्यक्ति के लिए कालिदास को कथानक में सम्मिलित किया गया है, जो कि अपने आप में स्वयं बहुत बड़े नाटककार थे ।

जाहिर है कि 'आषाढ़ का एक दिन' की रचना कै दौरान राकेश नाटक को रंगमंच से जोड़ने की ओर और रंगमंच की आन्तरिक अपेक्षा की खोज की ओर प्रवृत थे और इस ओर आश्वस्त भी थे कि संभवतः उनका यह नाटक रंगमंचीय संभावनाओं की खोज में काफी हद तक सहायक हो सके । इस समय जब कि नाटक अनेकों बार बड़ी-बड़ी

नाट्य संस्थाओं द्वारा विभिन्न निर्देशकों की प्रयोगात्मक कलात्मक दृष्टि के साथ खेला जा चुका है, यह जानी हुई बात है कि एक बार इस नाटक ने विविध रंगमंडलियों को प्रोत्साहित किया, रंगकर्मियों में अधिक कलात्मक कलागांभीर्य, दायित्व-भावना और दृष्टि पैदा की, शिल्पिक साधनों के विकास की ओर ध्यान केन्द्रित किया, रंग शिल्प के सम्बन्ध में ज्ञान प्रसार किया, अच्छे अभिनेताआ का दल तैयार किया, दूसरी ओर अपनी सघनता, तीव्रता में इसने हिन्दी नाटक को अधिक सार्थक रुप दिया, नाटक की भाषा में स्थूल धाराप्रवाह शैली, वक्तव्य या भाषण शैली के स्थान पर सूक्ष्म सांकेतिक, अभिनयोचित सारे गुण लाकर नाटय भाषा का एक आदर्श प्रस्तुत किया है । और पहली वार नाट्य समीक्षा के सारे मानदंड बदल डालने की आवश्यकता का अनुभव कराया है – नाट्य समीक्षा में अन्तर आया भी ।

प्रमुख भारतीय निर्देशकों इब्राहिम अलकाजी, ओम शिवपुरी, अरविंद गौड़, श्यामानंद जालान, राम गोपाल बजाज और दिनेन राकेश के नाटकों का निर्देशन कर उनका बहुत ही मनोहर ढग से मंचन किया । १९७१ में निर्देशक मणि कौल ने 'आषाढ़ का एक दिन' पर आधारित एक फिल्म बनाई, जिसको साल की सर्वश्रेष्ठ फिल्म का 'फिल्म फ़ेयर पुरस्कार' दिया गया । मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेने पर भी आधुनिक मनुष्य के अंतर्द्वंद और संशयों की ही गाथा कही गई है । 'आषाढ़ का एक दिन' में सफलता और प्रेम में एक को चुनने के द्वन्द से जूझते कालिदास एक रचनाकार और एक आधुनिक मनुष्य के मन की पहेलियों को सामने रखा है । वहीं प्रेम में टूटकर भी प्रेम को नहीं टूटने देने वाली इस नाटक की नायिका के रूप में हिन्दी साहित्य को एक अविस्मरनीय पात्र मिला है । राकेश के नाटकों को रंगमंच पर मिली शानदार सफलता इस बात का गवाह बनी कि नाटक और रंगमंच के बीच कोई खाई नहीं है । तसर्थ 'आषाढ़ का एक दिन' मंचीय दृष्टिकोण से एक सफल नाटक एंव विश्व प्रसिद्व नाटक कहा जा सकता है ।

चतुर्थ अध्याय

४.१ चरित्र चित्रण की पद्धतियाँ

पात्रों का चरित्र चित्रण करने के लिये नाटककार प्रधानतः दो शैलियों का आश्रय लेता है प्रथम, चरित्र चित्रण की प्रत्यक्ष पद्धति है। इसमें नाटककार स्वयं अथवा विभिन्न पात्रों के मुख से संवादों के माध्यम से उनके गुण दोषों को स्पष्ट करता है। द्वितीय परोक्ष पद्धति है जिसमें पात्रों के क्रिया कलाप, उनका व्यवहार उनकी चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट करता है। कला की दृष्टि से चरित्र चित्रण की परोक्ष पद्धति ही श्रेष्ठ मानी जाती है। आषाढ़ का एक दिन में प्रत्यक्ष पद्धति का अनुसरण बहुत कम किया गया है। एकाध स्थल ही ऐसे हैं जहाँ किसी पात्र विशेष के विषय मे दो टूक राय दी गयी हो उदाहरणार्थ, विलोम के इस कथन से कालिदास की द्विविधाग्रस्त मनःस्थिति और विलोम की स्पष्ट वक्तृता स्पष्ट होती है "और कालिदास क्यों नहीं चाहता ? क्योंकि मेरी आँखों में उसे अपने हृदय का सत्य झाँकता दिखाई देता है। उसे उलझन होती है।...... किंतु तुम तो जानती हो अम्बिका, मेरा एक मात्र दोष यह है कि मैं जो अनुभव करता हूँ, स्पष्ट कह देता हूँ।" (पृ.३५) परंतु इस प्रकार के स्थल बहुत कम हैं अधिकांशत पात्रों के वार्तालाप के ढंग, उनके कार्य कलापों के आधार पर ही पाठकों को उनके चरित्र के संबंध में अनुमान लगाना पड़ता है।

४.२ कालिदास का चरित्र चित्रण

साहित्य के क्षेत्र में कालिदास का नाम विश्व प्रसिद्ध है। उज्जयिनी में सम्राट चंद्रगुप्त के राज्याश्रय में रहकर उन्होंने उत्कृष्ट रचनाएँ संस्कृत साहित्य को प्रदान कीं। पाश्चात्य आलोचकों ने उन्हें संस्कृत साहित्य के शेक्सपीयर का अभिधान दिया। परंतु कालिदास से साहित्य के पाठकों का परिचय केवल उनकी रचनाओं के माध्यम से ही है। वे सर्वश्रेष्ठ रचनाकार कैसे बनें, उनके प्रेरणास्रोत क्या थे, उन्हें कौन कौन सी चुनौतियों का सामना करना पड़ा इत्यादि प्रश्नों का उत्तर कहीं से नहीं मिलता। कवि कालिदास और काश्मीर के शासक मातृगुप्त एक ही व्यक्ति थे जैसा कि प्रसाद जी ने चंद्रगुप्त नाटक में चित्रित किया है या अलग अलग यह प्रश्न भी अनुत्तरित ही है। इतिहास के इस मौन का लाभ उठाकर मोहन राकेश ने अपनी कल्पना के सहारे कालिदास के चरित्र का सृजन किया है। प्रस्तुत नाटक में कालिदास का इतिहास से

मात्र इतना ही संबंध है कि वे अपने समय के लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार थे और संभवतः मातृगुप्त के नाम से उन्होंने कुछ समय के लिये काश्मीर का शासन भार सँभाला ।

नाटककार ने अपनी कल्पना शक्ति के बल पर कालिदास के व्यक्तित्व को नया आयाम दिया है । उसके साहित्यकार बनने और राज्याधिकारी बनने की पृष्ठभूमि, उसके मानसिक द्वंद्व, उसकी दुविधा और पीड़ा इन सबको नवीन ढंग से वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है । इस संदर्भ में डा. गिरीश रस्तोगी का यह कथन अत्यंत सार्थक प्रतीत होता है, "साहित्य इतिहास के समय से नहीं बँधता न ही समय में इतिहास का विस्तार करता है । युग से युग को अलग नहीं करता, कई कई युगों को एक साथ जोड़ देता है । इस तरह इतिहास के आज और कल, कल और आज नहीं रह जाते समय की असीमता में कुछ ऐसे जुड़े हुए क्षण बन जाते हैं जो जीवन को दिशा संकेत देने की दृष्टि से अविभाज्य हैं । इस तरह साहित्य में इतिहास अपनी यथा तथ्य घटनाओं में व्यक्त नहीं होता, घटनाओं को जोड़ने वाली ऐसी कल्पनाओं में व्यक्त होता है जो अपने ही एक नये और अलग रूप में इतिहास का निर्माण करती है । इसलिए जो आषाढ़ का एक दिन नाटक और उसके नायक कालिदास को ऐतिहासिक नाटक और ऐतिहासिक व्यक्तित्व समझ कर ही देखेंगे वह उनकी एक नितान्त भ्रामक दृष्टि होगी और उनका नाटक की आत्मा तक, मौलिकता तक पहुँचना ही मुशिकल होगा ।" (मोहन राकेश ओर उनके नाटक, पृ.३५)

नाटक के आरंभ में ही अत्यंत कोमल भावुक प्रकृति के कालिदास के दर्शन होते हैं जो राजपुरुष के बाण से आहत मृगशावक के प्राण बचाने के लिए उधत है । वह उसे आराम देने के लिए बिस्तर पर सुलाना चाहता है, उसे गर्म दूध पिलाना चाहता है और राजपुरुष दंतुल से वाद विवाद करता है यह जानते हुए भी कि राजकर्मचारियों के अधिकार का क्षेत्र बहुत विस्तृत होता है, "हम जिएँगे हरिणशावक! जिएँगे न ? एक बाण से आहत होकर हम प्राण नहीं देंगे । हमारा शरीर कोमल है तो क्या हुआ? हम पीड़ा सह सकते हैं । एक बाण प्राण ले सकता है, तो उँगलियों का कोमल स्पर्श प्राण दे भी सकता है । हमें नये प्राण मिल जाएँगे । हम कोमल आस्तरण पर विश्राम करेंगे । हमारे अंगों पर घृत का लेप होगा । कल फिर वनस्थली में घूमेंगे । कोमल दूर्वा खाएँगे ।" (आषाढ़ का एक दिन, पृ.१५ वस्तुतः कालिदास के स्वभाव की

यह कोमलता, यह सहृदयता ही है जो उसे गाँव के दूसरे लोगों से भिन्न व्यकितत्व प्रदान करती है । उसकी भावुकता और संवेदनशीलता ही चरम पर पहुँच कर कविता के रूप में प्रस्फुटित होती है । इसी कारण उसकी प्रसिद्धि अव्यावहारिक और नासमझ व्यक्ति के रूप में और इसीलिए अंबिका को विश्वास नहीं हो पाता कि मल्लिका कालिदास के साथ सुखपूर्वक व्यतीत कर सकेगी और मातुल नाराज है कि वह अपने आदर्शों के कारण राज सम्मान के इतने अच्छे अवसर को हाथ से निकलने दे रहा है ।

कालिदास भावुक और अव्यावहारिक भले ही हों परंतु मूर्ख नहीं है । स्थितियों की गंभीरता को वह जानता है और अपने स्वभाव और सीमाओं को भी । उसे ज्ञात है कि मलिलका का अनुराग उसके मन में काव्य रचना की प्रेरणा जगाता है, गाँव का सहज-स्वाभाविक परिवेश और रमणीक प्राकृतिक दृश्य उसके अनुभवों को विस्तार देते हैं, अपनी निश्चिंत निर्द्वन्द्व जीवन पद्धति के कारण वह साहित्य के प्रति समर्पित है । उसे आशंका है कि राज्य की सुख सुविधाएँ, कृत्रिम जीवन पद्धति और नये उत्तरदायित्व उसकी प्रतिभा को बाधित कर देंगे, इसलिए वह उज्जयिनी जाने के प्रति उत्साहित नहीं है । अभी तो वह जो चाहता है, जैसे चाहता है और जब चाहता है लिखता है परंतु राज्याश्रय स्वीकार करने के बाद तो दूसरों की रुचि और आवश्यकताओं के अनुरूप लिखना होगा । उसका यह वक्तव्य कि “मैं राजकीय मुद्राओं से क्रीत होने के लिये नहीं हूँ । कालिदास की मानसिकता को स्पष्ट करने में पूर्णतः समर्थ है । वह समझौता नहीं करना चाहता । कालान्तर में उसकी आशंका भी सही सिद्ध होती है । वह न तो नये जीवन को स्वीकार पाता है और न अपने पुराने संबंधों और परिवेश से मुक्त हो पाता है । अंतः मातृगुप्त के कलेवर को त्याग अपने निजी परिवेश में लौट आने का मार्ग ही उसके पास बचता है । वह अपनी नवीन काव्य कृतियों के कारण देश-विदेश में प्रसिद्धि भले ही पा रहा है परंतु वास्तव में वह नवीन कुछ नहीं लिख रहा । नयी रचनाएँ पुराने ही अनुभवों का पुनः सृजन हैं “लोग सोचते हैं मैंने उस जीवन और वातावरण में रह कर बहुत कुछ लिखा है । परंतु मै जानता हूँ कि मैने वहीं रहकर कुछ नहीं लिखा । जो कुछ लिखा है वह यहाँ के जीवन का ही संचय था । कुमार संभव की पृष्ठभूमि यह हिमालय है और तपस्विनी उमा तुम हो । 'मेघदूत के यक्ष की पीड़ा मेरी पीड़ा है और विरह विमर्दिता यक्षिणी तुम हो, यधपि मैंने स्वयं यहाँ होने और तुम्हें नगर में देखने की कल्पना की । 'अभिज्ञान शाकुन्तलम में शकुन्तला के

रूप में तुम मेरे सामने थीं। मैंने जब जब लिखने का प्रयत्न किया तुम्हारे और अपने जीवन के इतिहास को फिर(फिर दोहराया और जब उससे हटकर लिखना चाहा तो रचना प्राणवान नहीं हुई।" (पृ.१०२)

आषाढ़ का एक दिन नाटक में कालिदास और मल्लिका का प्रेम आद्योपान्त व्याप्त है। स्थान स्थान पर उनके इस प्रेमभाव की अभिव्यक्ति भी हुई है। राज्य सम्मान को स्वीकार न कर पाने का एक कारण मल्लिका का संभावित वियोग भी है। "फिर एक बार सोचो, मल्लिका ! प्रश्न सम्मान और राज्याश्रय स्वीकार करने का ही नहीं है। उससे कहीं बड़ा एक प्रश्न मेरे सामने है।" (पृ.४२/४४) यह कहीं बड़ा प्रश्न और कोई नहीं मल्लिका ही है। पत्नी प्रियंगुमंजरी से भी उसका यह भाव छिप नहीं सका है इसलिए वह स्वभाविक उत्सुकता और ईर्ष्यावश मल्लिका से मिलने पहुँचती है। नाटक के उत्तरार्द्ध में अपने जीवन को नये सिरे से आरंभ करने के लिए कालिदास सत्ता वैभव सब कुछ छोड़-छाड़ कर मल्लिका के पास वापिस आ जाता है। नाटक के आरंभ में कालिदास की असाधारण प्रतिभा, यशप्रतिष्ठा, भावुकता, संवेदनशीलता, सैर्दयता, आत्माभिमान के दर्शन होते हैं परंतु धीरेधीरे उसके व्यक्तित्व की यह चमक क्षीण होती दिखाई देती है। जो कालिदास मल्लिका के प्रति स्नेह भाव से बँधा होने के कारण उज्जयिनी जाने को तैयार नहीं था वह एक बार चले जाने के बाद फिर उसकी कोई खबर नहीं लेता। काश्मीर जाते हुए एक बार आता भी है तो उससे मिले बिना ही चला जाता है क्योंकि उसे डर है कि उसका अस्थिर मन कहीं और अधिक अस्थिर न हो जाये। जो अपनी भावना और अपने सिद्धान्त के प्रति समझौता करने को तैयार नहीं था वह सत्ता और अधिकर को "अभावपूर्ण जीवन की एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया मान कर स्वीकार कर लेता है। इस स्वीकार के पीछे उन सब से प्रतिशोध का भाव भी था जिन्होंने उसकी भर्त्सना की थी, मजाक उड़ाया था। इन परिवर्तित परिस्थितियों में उसके अपने गाँव के निवासियों ने उसके आगमन को उत्सव की भाँति मनाया था, उसके राजकर्मचारियों ने गाँव के सहज-स्वाभाविक जीवन को छिन्नभिन्न कर दिया था, वे लोग एक एक वस्तु की अनुकृति बनाते फिर रहे थे, वहाँ के पत्थरों जीव जंतुओं यहाँ तक कि गरीब अनाथ बच्चों को अपने साथ ले जाना चाहते थे जिससे कालिदास को अपनी जड़ों से उखड़ने का खेद न हो, उसकी पत्नी ने मल्लिका की भावनाओं की चिंता न करते हुए उसके घर की दीवारों के

परिसंस्कार और किसी राजकर्मचारी से विवाह करने का अनुचित प्रस्ताव रखा था। किन्तु कालिदास इन अनुचित और हास्यास्पद उपक्रमों का कहीं विरोध करता दिखाई नहीं देता। तीसरे अंक में वह वापिस आता भी है तो इसलिए कि वह अपने 'उस जीवन से असंतुष्ट था। अपने लंबे वक्तव्य में वह अपने जीवन, क्रियाओं प्रतिक्रियाओं, मानसिकता का तो स्पष्टीकरण करता है, अपनी यह इच्छा भी स्पष्ट कर देता है कि वह मल्लिका के साथ अपने जीवन को पुनः अथ से आरंभ करना चाहता है। परंतु एक बार भी यह जानने की कोशिश नहीं करता कि मल्लिका पर इस दौरान क्या बीती? उसे कैसे कैसे कष्टों का सामना करना पड़ा, कैसे-कैसे व्यंग्य बाणों को झेलना पड़ा। मल्लिका के अभाव की संतान को देखकर वह बिना कुछ कहे वहाँ से वापिस चला जाता है परंतु उसकी इच्छा अनिच्छा जानने का प्रयत्न वह नहीं करता। इन प्रसंगों से कालिदास एक अत्यंत आत्मकेंद्रित, खंडित और दुर्बल मनःस्थिति वाले चरित्र के रूप में हमारे सामने आता है। अंबिका ने उसके व्यक्तित्व का आकलन ठीक ही किया है ''वह व्यक्ति आत्मसीमित है संसार में अपने सिवा उसे और किसी से मोह नहीं है।" (पृ.२३) असाधारण प्रतिभा के स्वामी कालिदास के व्यकितत्व के साथ इन दुर्बलताओं का मेल नहीं बैठता। इसीलिए कालिदास के व्यक्तित्व को आधार बनाकर आलोचक आपत्तियाँ उठाते रहे हैं। वस्तुतरु मोहन राकेश का अभिप्रेत कालिदास के माध्यम से एक सृजन प्रतिभासंपन्न साहित्यकार, एक आधुनिक मानव की मानसिकता, उसकी विवशता, उसके द्वन्द्व, उसकी पीड़ा को उभारना रहा है और इसमें लेखक सफल रहा है।

कालिदास संस्कृत के प्रसिद्ध महाकवि हैं। उनके इसी ऐतिहासिक चरित्र को आधार बनाकर मोहन राकेश ने अपने नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' का कथानक तैयार किया है। नाटक में कालिदास पहाड़ी ग्राम प्रांतर में रहने वाला एक निर्धन कवि है जो अपने मामा मातुल के आश्रय पर पलता है। ग्रामबाला मल्लिका उसकी प्रेमिका है। कलिदास की रचना 'ऋतुसंहार' की प्रसिद्धि के कारण उज्जयिनी के सम्राट चंद्रगुप्त उन्हें राजकवि का स्थान प्रदान करते हैं। वे मातृगुप्त के रूप में काश्मीर का शासक बनते हैं। राजकन्या प्रियंगुमंजरी से उनका विवाह होता है किन्तु भावुक कवि राज्याश्रय का वैभव संभाल नहीं पाता है। काश्मीर का शासन त्यागकर अपने ग्राम प्रांतर लौट आते हैं। कालिदास मल्लिका के साथ अथ से आरंभ करना चाहते हैं

लेकिन मल्लिका के वर्तमान स्वरूप को स्वीकार नहीं कर पाते और पुनः पलायन करते हैं। नाटक में कालिदास की निम्नलिखित चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख मिलता है।

उदार, भावुक एवं प्रकृति प्रेमी

कथानक के आरंभ में कालिदास एक उदार, भावुक कवि और प्रकृति प्रेमी के रूप में सामने आते हैं। वे मल्लिका के साथ आषाढ़ महीने की पहली बारिश में ग्राम प्रांतर में विचरण करते हैं और प्राकृतिक सौन्दर्य का आनंद उठाते हैं। वे एक घायल हरिणशावक का उपचार करते हैं और अपनी उदारता का परिचय देते हुए कहते हैं ...न जाने इसके रूई जैसे कोमल शरीर पर उससे बाण छोड़ते बना कैसे?

प्रेम भावना

कालिदास के मन में मल्लिका के प्रति प्रेम का भाव है। वह मल्लिका को छोड़कर उज्जयिनी नहीं जाना चाहता लेकिन मल्लिका उसे प्रेरित करके भेज देती है। प्रियंगुमंजरी भी कालिदास और मल्लिका की प्रेम प्रगाढ़ता का परिचय देते हुए कहती है -उन्होंने (कालिदास) बहुत बार इस घर की और तुम्हारी चर्चा की है। जिन दिनों 'मेघदूत' लिख रहे थे...।

चरित्र में द्वंद्व

कालिदास के चरित्र में अंतद्र्वंद्व है। वह निर्धन कवि है और जब उसे उज्जयिनी जाकर राजकवि बनने का मौका मिलता है तब उसका द्वंद्व सामने आ जाता है। वह भागकर जगदंबा के मंदिर में छिप जाता है। वह सोचता है कि क्या वह मल्लिका से, ग्राम प्रांतर से, अपनी जन्म(भूमि से, अपनी प्रेरणा से दूर तो नहीं हो जाएगा। कालिदास कहता है -नई भूमि सुखा भी तो सकती है...और उस जीवन की अपनी अपेक्षाएँ भी होंगी...

स्वाभिमानी और प्रतिक्रियावादी

कालिदास में सहज स्वाभिमान विद्यमान है। आचार्य वररूचि उन्हें राजकवि का पद दिलाने उज्जयिनी लेने आते हैं किन्तु वे अपने मामा मातुल से स्पष्ट कह देते हैं की मैं राजकीय मुद्राओं से क्रीत होने के लिए नहीं हूँ। कालिदास प्रतिक्रियावादी पुरुष है। वह सहज स्वाभाविक जीवन न जीकर प्रतिक्रियाओं में जी रहा है। अम्बिका और विलोम उसे अच्छी तरह से जानते हैं। वे जानते हैं कि कालिदास कितना भी इनकार करे उज्जयिनी जाएगा अवश्य और जाता भी है। यहाँ तक कि प्रियंगुमंजरी से

विवाह भी करता है । इन उपलब्धियों को अपने अभाव पूर्ण जीवन की प्रतिक्रिया बतलाते हुए मल्लिका से कहता है की मैं नहीं जानता था कि अभाव और भर्त्सना का जीवन व्यतीत करने के बाद प्रतिष्ठा और सम्मान के वातावरण में जाकर मैं कैसा अनुभव करूँगा ।...........अभावपूर्ण जीवन की वह एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी । सम्भवतः उसमें कहीं उन सबसे प्रतिशोध लेने की भावना भी थी जिन्होंने जब-तब मेरी भर्त्सना की थी, मेरा उपहास उड़ाया था ।

दुर्बल एवं पलायनवादी

कालिदास दुर्बल चरित्र का व्यक्ति है । वह मल्लिका के प्रति अपने प्रेम को खुलकर स्वीकारने का साहस नहीं दिखाता है । काश्मीर जाते हुए गाँव आकर भी मल्लिका से न मिलना उसे कमजोर और स्वार्थी सिद्ध करता है । नाटक के अंत में जब कालिदास काश्मीर से पलायन करके मल्लिका के पास आता है और उसके साथ आरंभ से जीवन शुरू करना चाहता तब मल्लिका को माँ के रूप में देखकर उसे पुनः छोड़कर पलायन कर जाता है ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि नाटककार ने कालिदास के चरित्र को इतिहास और कल्पना की सहायता से विकसित किया है और आधुनिक संदर्भों से जोड़ने का प्रयास किया है । आज भी राज्याश्रय और प्रशासन के भीतर लोभलालच की पूर्ति की इच्छा में कालिदास जैसे रचनाशील, बौद्धिक प्रतिभा के धनी कलाकार छटपटाते और टूटते दिखाई देते हैं ।

४.३ मल्लिका का चरित्र चित्रण

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की नायिका मल्लिका है । वह भारतीय नारी का प्रतिनिधित्व करती है । वह नाटक का सबसे शक्तिशाली और मार्मिक चरित्र है । मल्लिका अम्बिका की पुत्री है । वह कालिदास की प्रतिभा की पूजारिन है । वह कालिदास को भावनात्मक स्तर पर पवित्र और निस्वार्थ प्रेम करती है । मल्लिका के चरित्र की विशेषताओं को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं -

मल्लिका प्रकृति की गोद में पली प्रकृति बाला है । उसके मन में प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति उत्कृष्ट लालसा है । नाटक के आरंभ में वह अपने प्रेमी कालिदास के साथ आषाढ़ की पहली बारिश में भीगती है । मल्लिका के शब्दों में आषाढ़ का पहला दिन

और ऐसी वर्षा माँ। ऐसी धारासार वर्षा। दूर दूर तक की उपत्यकाएँ भीग गयीं। और मैं भी तो। देखो न माँ कैसी भीग गयी हूँ।

आषाढ़ का एक दिन नाटक में मल्लिका की स्थिति नायिका की है। नायक कालिदास की प्रेयसी और प्रेमिका होने के कारण भी और नाटक की मुख्य कथा से प्रत्यक्षतः संबद्ध होने के कारण भी। नाटक की प्रत्येक घटना का प्रभाव मल्लिका पर पड़ता है। कालिदास से प्रेम करने के कारण अंबिका के गुस्से और लोकापवाद का सामना उसे ही करना पड़ता है, विलोम और मातुल के व्यंग्य बाणों को वही झेलती है, कालिदास के उज्जयिनी जाने, दूसरे अंक में वापिस आकर भी न मिलने और तीसरे अंक में कालिदास के आकर फिर वापिस चले जाने की घटनाओं का भी सीधा प्रभाव उसी पर पड़ता है, यहाँ तक कि प्रियगुमंजरी के अपमानजनक और हास्यास्पद प्रस्तावों को भी वह अत्यंत धैर्यपूर्वक सहन कर जाती है। वह कालिदास से प्रेम करती है और कालिदास उसे। नाटक के आरंभ में ही भीगे वस्त्रों में मल्लिका का प्रवेश होता है और आते ही उसे अपनी माँ अम्बिका के रोष को झेलना पड़ता है कारण आज वह कालिदास के साथ आषाढ़ के पहले दिन की वर्षा में भीगती रही है। परंतु वह अपने इस अनुभव पर इतनी मुग्ध है कि उसे किसी की नाराजगी की परवाह नहीं। यहाँ यह बात महत्त्वपूर्ण है कि मल्लिका के प्रेम का आधार कालिदास की दैहिक सुंदरता अथवा उसकी प्रतिष्ठा या उसका सामाजिक स्तर नहीं। वरन उसके प्रेम का आधार है कालिदास की सृजनशीलता, उसके व्यक्तित्व की सहजता, आत्मीयता, भावुकता और संवेदनशीलता। मनुष्य को मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठित करने वाले ये ही गुण मल्लिका को कालिदास से बाँधे रखते हैं। उसके लिए भावना महत्वपूर्ण है, भौतिक सुख सुविधाएँ नहीं। इसीलिए वह कहती है मैंने भावना में एक भावना का वरण किया है।

मेरे लिए वह संबंध और सब संबंधों से बड़ा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है.....।

× × × × × ×

जीवन की स्थूल आवश्यकताएँ ही तो सब कुछ नहीं हैं, माँ! उनके अतिरिक्त भी तो बहुत कुछ है।

मल्लिका का यह निःस्वार्थ प्रेम ही उसे वह शक्ति देता है जो अपने प्रेमास्पद को बाँधती नहीं वरन उसके विकास की कामना से उसे मुक्त कर देती है । कालिदास की उन्नति ही मानों उसके जीवन का एकमात्र ध्येय है इसीलिए वह कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए प्रेरित करती है क्योंकि उसे आशा है और कालिदास की क्षमता पर विश्वास भी कि नयी जीवन स्थितियाँ कालिदास की प्रतिभा को नयी ऊँचाइयाँ प्रदान करेंगी । वह अपने जीवन को तपस्विनी की भाँति व्यतीत करती है, अनेक कष्ट झेल कर भी उसकी रचनाओं को मँगाती और पढ़ती है । उसे अपने अभाव ग्रस्त जीवन से कोई शिकायत नहीं और लोकापवाद की कोई चिंता नहीं । कालिदास के जाने, उससे मिलने न आने और आकर चले जाने का उसे दुख तो होता है किंतु शिकायत नहीं । कालिदास से जुड़े अपवाद हों या उसका राजकन्या से विवाह हर एक घटना को वह तार्किक संगति दे देती है ।"व्यक्ति उन्नति करता है तो उसके नाम के साथ कई तरह के अपवाद जुडने लगते हैं ।"(पृ.५१)

"उनके प्रसंग में मेरी बात कहीं नहीं आती । मैं अनेकानेक साधारण व्यक्तियों में से हूँ । वे असाधारण हैं । उन्हें जीवन में असाधारण का ही साथ चाहिए था ।..... सुना है राजदुहिता बहुत विदुषी है ।" (पृ.५२)

"इसके विपरीत मुझे अपने से ग्लानि होती है, कि यह, ऐसी मैं, उनकी प्रगति में बाधा भी बन सकती थी । आपके कहने से मैं उन्हें जाने के लिए प्रेरित न करती, तो कितनी बड़ी क्षति होती ?" (पृ. ५२)

"उनके संबंध में कुछ मत कहो, माँ कुछ मत कहो...... ।" (पृ.८६)

मल्लिका में जितना समर्पण का भाव है उतना ही आत्मविश्वास और दृढ़ता भी है । इसलिए कालिदास के संबंध से उसे कोई अपराध बोध नहीं है । उसके लिए जीवन में मूल्यों की महत्ता है इसलिये वह कालिदास का पंसद करती है, भौतिक सुख सुविधाएँ उसके लिए महत्वहीन हैं और व्यावहारिकता अनावश्यक, इसलिए विलोम का उसके हृदय में कोई स्थान नहीं । विशेष बात यह है कि वह अपने विचारों और सिद्धान्तों के प्रति इतनी स्पष्ट है कि उसे कहने या कार्यान्वित करने में उसे कोई दुविधा नहीं होती । उसकी यह दृढ़ता कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए तैयार करने में भी दिखाई देती है और विलोम के प्रति भी । वह कालिदास को समझाती है । "यह क्यों नहीं सोचते कि नयी भूमि तुम्हें यहाँ से अधिक सम्पन्न और उर्वरा मिलेगी

। इस भूमि से तुम जो कुछ ग्रहण कर सकते थे, कर चुके हो । तुम्हे आज नयी भूमि की आवश्यकता है, जो तुम्हारे व्यक्तित्व को अधिक पूर्ण बना दे ।" (पृ.४५) विलोम को डाँट कर उसे उसकी वास्तविक स्थिति का बोध कराना चाहती है । "आर्य विलोम, आप अपनी सीमा से आगे जाकर बात कर रहे हैं । मैं बच्ची नहीं हूँ अपना भला(बुरा सब समझती हूँ ।... आप संभवतः यह अनुभव नहीं कर रहे आप यहाँ इस समय एक अनचाहे अतिथि के रूप में उपस्थित ह ।" (पृ.४२) मल्लिका का आत्माभिमान उस समय भी स्पष्ट होता है जब उसे ज्ञात होता है कि कालिदास इस ग्राम प्रदेश में आये हुए हैं । वह धैर्यहीन होकर उससे स्वयं मिलने की चेष्टा नहीं करती वरन उसके आने की प्रतीक्षा करती है । रंगिनी-संगिनी और अनुस्वार अनुनासिक का व्यवहार भी उसे विचित्र और हास्यास्पद लगता है किंतु उसके अपने व्यवहार से कहीं अधीरता का बोध नहीं होता । वह अपने और कालिदास के स्नेह संबंध की गहनता से भी परिचित है और कालिदास तथा प्रियंगुमंजरी के विवाह संबंध से भी । किंतु उसे अपनी मर्यादा का ज्ञान है इसलिए प्रियंगुमंजरी के अशिष्ट और अनुचित प्रस्तावों को बिना नाराज हुए अस्वीकार कर देती है । विवाह प्रसंग के संदर्भ में वह स्वयं को स्वतंत्रा मानती है । इसीलिए उसे लोकापवाद का भय नहीं है । उसके अनुसार किसी को भी उसके व्यकितगत जीवन में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है । "क्या कहते हैं ? क्या अधिकार है उन्हें कुछ भी कहने का ? मल्लिका का जीवन उसकी अपनी संपत्ति है । वह उसे नष्ट करना चाहती है तो किसी को उस पर आलोचना करने का क्या अधिकार है ?" (पृ.१२) वस्तुतः मल्लिका के माध्यम से मोहन राकेश ने आधुनिक युग की स्वतंत्र चेता नारी को प्रस्तुत किया है जो स्नेहशील है, आत्मभिमानी और दृढ़ है, सोचनेसमझने और स्वयं निर्णय लेने में सक्षम है । बल्कि कालिदास का चरित्र उसके सम्मुख दुर्बल नज़र आने लगता है । डा. गिरीश रस्तोगी ने उसके चरित्र का विश्लेषण करते हुए ठीक ही लिखा है । "जहाँ तक मल्लिका का संबंध है, उससे संबंधित सारे स्थल निर्विवाद हैं.... । मतलब मल्लिका अपने सारे निर्णयों, उलझनों और भावों में बहुत स्पष्ट है । लगता है मल्लिका राकेश की आकांक्षा है केवल कल्पना नहीं, एक ऐसा नारी रूप जो रचनाकार के लिए प्रेरक हो, उसकी रचनात्मक शक्ति का विस्तार करने में सहायक हो, कही बाधक न बनता हो ।" (मोहन राकेश और उनके नाटक, पृ.७१/७२)

मल्लिका स्वतंत्र चिंतनशील ग्रामीण लड़की है । उसके पिता का देहांत हो गया है और वह अपनी माता अम्बिका के साथ अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करती है । नाटक के आरंभ में वह एक अल्हड़ युवती के रूप में सामने आती है । मल्लिका आषाढ़ के प्रथम दिन अपने प्रेमी कालिदास के साथ स्वच्छंदता से भीगती हुई वापस घर लौटती है । वह कालिदास के साथ अपने प्रेम को बिना किसी संकोच के अपनी माँ से कहती है । मल्लिका के शब्दों में - "क्या कहते हैं वे? क्या अधिकार है उन्हें कुछ कहने का? मल्लिका का जीवन उसकी अपनी संपत्ति है ।" (पृ.१२) मल्लिका व्यक्तिगत स्वतंत्रता में विश्वास करती है ।

मल्लिका भावुक प्रेमिका है । वह भावना में जीती है । वह कालिदास को प्रेम करती है । उसमे स्वार्थ व प्रतिदान की भावना नहीं है । वह कालिदास की प्रेरणा बनती है । जब कालिदास राजकवि बनने का प्रस्ताव ठुकरा देते हैं, तब मल्लिका उसे प्रेरित करती है की यहाँ बैठो । तुम मुझे जानते हो न ? तुम समझते हो कि तुम इस अवसर को ठुकराकर यहाँ रह जाओगे तो मुझे सुख होगा ? मैं जानती हूँ कि तुम्हारे चले जाने से मेरे अन्तर में रिक्तता छा जायेगी । बाहर भी संभवतः बहुत सूना प्रतीत होगा । फिर भी मैं अपने साथ छल नहीं कर रही हूँ । मैं हृदय से कहती हूँ तुम्हें जाना चाहिए ।

मल्लिका अपनी माँ से अपने पवित्र प्रेम की चर्चा करते हुए कहती है की मैंने भावना में एक भावना का वरण किया है । मेरे लिए वह संबंध और संबंधों से बड़ा है । मैं वास्तव में अपनी भावना से ही प्रेम करती हूँ, जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है । मल्लिका स्वाभिमानी युवती है । वह आत्म सम्मान को बनाए रखने का भरसक प्रयास करती है । जब प्रियंगुमंजरी मल्लिका को घर के परिसंस्कार का प्रस्ताव देती है तब वह उस प्रस्ताव को ठुकरा देती है । मल्लिका कहती है की आप बहुत उदार हैं । परंतु हमें ऐसे घर में रहने का ही अभ्यास है, इसलिए हमें असुविधा नहीं होती । मल्लिका बीमार माँ के लिए विलोम द्वारा मधु भिजवाने की बात सुनकर उसे मना कर देती है ।

मल्लिका में ममता व करुणा के गुण हैं । जब कालिदास घायल हिरण के बच्चे को लाकर मल्लिका से कहता है कि वह उसे वहाँ इसलिए लाया है कि वहाँ उसे माँ

का सा स्नेह मिलेगा की मैंने कहा तुम्हें वहाँ ले चलता हूँ, जहाँ तुम्हें अपनी माँ की सी आँखें और उसका सा ही स्नेह मिलेगा... ।

मल्लिका निस्वार्थ युवती है । वह कालिदास से प्रेम करती है जिसके लिए वह अपनी माँ और समाज तक की परवाह नहीं करती है । उसका प्रेम निस्वार्थ है तभी तो वह अपनी चिंता न करके कालिदास के अच्छे भविष्य के लिए उसे उज्जयिनी जाने के लिए विवश करती है । मल्लिका जानती है कि कालिदास के चले जाने के बाद उसके जीवन में रिक्तता छा जाएगी, फिर भी वह त्याग करती है ।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि मल्लिका मोहन राकेश की विशिष्ट कला सृष्टि है । वह पवित्र प्रेम को समर्पित होते हुए भी परिस्थितिवश पुरुष की शोषण वृत्तियों का शिकार बनती है ।

४.४ विलोम का चरित्र चित्रण

आषाढ़ का एक दिन का नायक कालिदास है परंतु विलोम की स्थिति भी उससे कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । उसे प्रतिनायक का दर्जा दिया जा सकता है । नाटक में उसकी उपस्थिति प्रत्येक अंक में है । उसका सीधा संबंध कालिदास और मल्लिका से है । कालिदास की भाँति वह भी मल्लिका से प्रेम करता है यधपि वह यह भलीभाँति जानता है कि मल्लिका के जीवन और हृदय में उसका कोई स्थान नहीं है । मल्लिका सदा ही उसके प्रवेश को अनधिकार प्रवेश ही मानती है और कालिदास भी उससे मिलकर कभी सहज नहीं हो पाता । मल्लिका कहती है "आर्य विलोम, मैं इस प्रकार की अनर्गलता क्षम्य नहीं समझती" (पृ.४०) और इसी क्रम में कालिदास कहता है "तुम दूसरों के घर में ही नहीं, उनके जीवन में भी अनधिकार प्रवेश कर जाते हो ।" (पृ.४१)

वस्तुतः कालिदास अतिभावुकता, कोमलता और अव्यावहारिकता का चरम बिंदु है तो विलोम व्यावहारिक दृष्टिकोण का । उसकी प्रकृति कालिदास की प्रकृति से नितान्त विपरीत है इसीलिए लेखक ने उसे विलोम नाम दिया है । कालिदास भी स्वंय को और विलोम को विपरीत ध्रुव ही मानता है "वर्षों का व्यवधान भी विपरीत को विपरीत से दूर नहीं करता ।" (पृ.३९) इन दोनों पात्रों के मध्य संघर्ष की जो स्थिति निरंतर बनी रहती है उसका मुख्य कारण स्वभाव की यह विपरीतता ही है ।

नायक के विपरीत प्रकृति का होते हुए भी विलोम को खलनायक नहीं माना जा सकता यधपि उसकी उपस्थिति खलनायक की ही भाँति है । खलनायक उस दुष्ट पात्र को कहते हैं जो कथानक में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न करे, नायकनायिका को सहयोग करने के स्थान पर उनके मार्ग की बाधा बने परंतु विलोम ऐसा कुछ भी नहीं करता । मल्लिका के प्रति स्नेह के कारण कालिदास के प्रति उसके मन में ईर्ष्या और प्रतिद्वंद्विता का भाव है जिससे प्रेरित होकर वह जबतब उन दोनों का सामना करता है और अपने पक्ष को सिद्ध करने का प्रयास करता है । उसे मल्लिका की भावनाओं का ज्ञान है, उसके भविष्य के प्रति वह चिंतित भी है । कालिदास के व्यकितत्व को भी वह भलीभाँति पहचानता है इसीलिए उसके उज्जयिनी जाने से पूर्व अपनी आशंकाओं को स्पष्ट कर देता है । उसे मालूम है कि कालिदास के साहचर्य के कारण मल्लिका और अंबिका को अनेक प्रकार के लोकापवाद का सामना करना पड़ता है, करना पड़ सकता है, कालिदास यदि राजधानी चला जाएगा तो मल्लिका का क्या होगा और राजकीय सुखसुविधाओं के बीच ऐसे बहुत से कारण होते है जिनके सम्मुख व्यक्ति विवश हो जाता है निम्नलिखित उद्धरण विलोम के व्यकितत्व को समझने में सहायक होंगे "यह अनुभव करने की मैंने आवश्यकता नहीं समझी । तुम मुझसे घृणा करती हो, मैं जानता हूँ । परंतु मैं तुमसे घृणा नहीं करता । मेरे यहाँ होने के लिए इतना ही पर्याप्त ह ।" (पृ.४२)

× × × × × ×

"आज तक ग्रामप्रांतर में कालिदास के साथ मल्लिका के संबंध को लेकर बहुत कुछ कहा जाता रहा है । उसे दृष्टि में रखते हुए क्या यह उचित नहीं कि कालिदास यह स्पष्ट बता दे कि उसे उज्जयिनी अकेले ही जाना है या ..... ।" (पृ.४०)

× × × × × ×

"सुना है वहाँ जाकर व्यक्ति बहुत व्यस्त हो जाता है वहाँ के जीवन में कई तरह के आकर्षण हैं रंगशालाएँ, मदिरालय और तरहतरह की विलास भूमियाँ !" (पृ.३८)

विलोम की इन शंकाओं को कोई समाधान नहीं होता और उसकी आशंका अंततस् सही सिद्ध होती है । कालिदास नये वातावरण में मलिलका को भूलता तो नहीं परंतु उसे पास भी नहीं आ पाता । विलोम अपने विषय में बहुत स्पष्ट है अपनी प्रकृति के विषय में, अपनी योग्यता और आकांक्षाओं के विषय में । इसीलिए वह कहता

है “विलोम क्या है ? एक असफल कालिदास और कालिदास ? एक सफल विलोम । हम कहीं एक दूसरे के बहुत निकट पड़ते है ।” (पृ.३९) विलोम और कालिदास दोनों मल्लिका से प्रेम करते हैं और यशलाभ के आकांक्षी भी हैं । परंतु कालिदास को मल्लिका से प्रेम भी मिला है और यश भी । जबकि विलोम इन दोनों ही उपलब्धियों से वंचित रह गया है । विलोम के स्वभाव की यह स्पष्टता उसकी वाणी में भी झलकती है वह जो कुछ सही सोचता है उसी सच को कहने का साहस भी रखता है । उसकी इस स्पष्टवादिता के कारण ही नाटक में बारबार द्वन्द्व और संघर्ष की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है । विलोम नाटक का नायक भले ही न हो परंतु नाटक में अनेक ऐसे प्रसंग हैं जब उसका चरित्र कालिदास की अपेक्षा अधिक दृढ़ दिखाई देता है । दूसरे अंक में कालिदास के मिलने भी न आने से वह भी क्षुब्ध है क्योंकि इससे मल्लिका और अंबिका दुःखी हैं । तीसरे अंक में भी यही संकेत मिलता है कि अंबिका की मृत्यु के उपरान्त उसी ने मल्लिका को आश्रय दिया है ।

४.५ अम्बिका का चरित्र चित्रण

अम्बिका गाँव की एक वृद्धा स्त्री और मल्लिका की माँ है । परंतु इन दोनों का स्वभाव और मान्यताएँ परस्पर विपरीत हैं । वह मल्लिका की भाँति मात्र भावनाओं में विश्वास नहीं रखती । उसके लिये लोकाचार, भौतिक आवश्यकताएँ और सांसारिक सुख भी महत्वपूर्ण हैं इसीलिए वह अन्य सामान्य माँओ की भाँति मल्लिका का विवाह कर देना चाहती है जिससे वह लोकापवाद से बच सके और लौकिक दृष्टि से सामान्य जीवन बिता सके । यथार्थ से आँखे मूँदकर मात्र भावनाओं के सहारे जीवन नहीं जिया जा सकता । वह मल्लिका और कालिदास के संबंध को इसीलिए नापसंद करती है । कालिदास के उज्जयिनी जाने के भी पक्ष में भी वह नहीं है । “तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना और आत्म प्रवंचना है ।..... भावना में भावना का वरण किया है ।..... मैं पूछती हूँ भावना में भावना का वरण क्या होता है? उससे जीवन की आवश्यकताएँ किस तरह पूरी होती हैं ?” (पृ.१३)

मल्लिका की जीवन दृष्टि से असहमत होते हुए भी उसका ममत्व छिप नहीं पाता । हालाँकि उसकी प्रकट अभिव्यक्ति कहीं नहीं दिखाई देती । परंतु उसकी खीझ, गुस्सा, चिंता और अस्वस्थता सब उसी के लक्षण हैं । यह वात्सल्य मल्लिका कालिदास संबंधी प्रवाद को लेकर भी झलकाता है, मल्लिका को छोड़कर कालिदास के राजधानी

जाने को लेकर भी और प्रियंगुमंजरी के अशोभनीय प्रस्तावों पर भी । "इसके मन में यह कल्पना नहीं है क्योंकि यह भावना के स्तर पर जीती है ।" (पृ.७४)

अम्बिका आत्माभिमानिनी भी है । अन्य सामान्य माँओं की भाँति वह भी मल्लिका का घर बसा देखना चाहती है किन्तु अपमान का मूल्य देकर नहीं । सारे अभावों और विवशता के बावजूद वह प्रियंगुमंजरी के दर्प भरे व्यवहार से आहत होती है और निडर होकर उसकी ही भाषा में उत्तर भी देती है । "यह घर सदा से इस स्थिति में नहीं है राजवधू मेरे हाथ चलते थे, तो मैं प्रतिदिन इसे लीपती बुहारती थी । यहाँ की हर वस्तु इस तरह गिरी टूटी नहीं थी । परंतु आज तो हम दोनों माँ बेटी भी यहाँ टूटी सी पड़ी रहती हैं ।" (पृ.७५)

अम्बिका को मानव स्वभाव का भी अच्छा ज्ञान है । वह कालिदास के आत्मलीनता के स्वभाव को पहचान लेती है । मल्लिका और कालिदास के संबंध के पक्ष में वह जो नहीं है उसका एक कारण यह भी है कि वह जानती है कि "यह आत्मलीनता मनुष्य को आत्मकेंद्रित और स्वार्थी बना देती है और ऐसा व्यक्ति कभी किसी को सुख नहीं दे सकता वह व्यक्ति आत्मसीमित है । संसार में अपने सिवा उसे और किसी से मोह नहीं है ।" (पृ.२३) उसका यह निष्कर्ष पूर्णतः गलत भी नहीं है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अंबिका का चरित्र यधपि सहायक चरित्र के रूप में नियोजित हुआ है परंतु अपनी ममता और खरेपन के कारण वह पाठकों को प्रभावित किये बिना नहीं रहती ।

४.६ प्रियंगुमंजरी

प्रियंगुमंजरी की भी नाटक में स्थिति सहायक पात्र के रूप में ही है । वह उज्जयिनी के यशस्वी सम्राट की पुत्री है । उसकी विद्वत्ता चर्चा का विषय बन चुकी है "उन्हें जीवन में असाधारण का ही साथ चाहिए था ।...... सुना है राजदुहिता बहुत विदुषी है ।" (पृ.५२) कालिदास से उसका विवाह हुआ है । मल्लिका उसे असाधारण कह कर भले ही संतोष कर ले परंतु अपने आचारण से वह एक साधारण स्त्री ही प्रतीत होती है । उसने अत्यंत प्रतिभाशाली कालिदास से विवाह अवश्य किया परंतु कालिदास के प्रेम की स्वामिनी शायद वह नहीं बन पाई है । उसे भलीभाँति ज्ञात हो गया है कि कालिदास के हृदय में मल्लिका और अपने ग्रामीण परिवेश का जो स्थान है उसे न तो वह प्राप्त कर सकती है न ही उज्जयिनी और काश्मीर की सत्ता, सुख

और वैभव । उसके मन में स्त्री सुलभ जिज्ञासा और ईर्ष्या भी है कि मल्लिका और उस ग्राम प्रांतर की ऐसी कौन सी विशेषता है जिसके सम्मुख राज्याधिकार और वैभव विलास भी प्रभावहीन प्रतीत होते हैं । अपनी इस जिज्ञासा की शांति के लिए ही वह काश्मीर जाते हुए कुछ समय के लिये उस गाँव में आती है और विशेष रूप से मल्लिका से मिलती है । परंतु उसका कोई संवाद, हाव भाव, क्रिया प्रतिक्रिया ऐसी नहीं है जिससे यह आभास होता हो कि वह वहाँ की सादगी और सहजता से प्रभावित हुई हो । राजकन्या होने का दर्प उसके प्रत्येक हाव भाव से झलकता रहता है । वह अपने आप को और लोगों से भिन्न और ऊँचा मानती है और उसका पति होने के कारण कालिदास की स्थिति भी गाँव के अन्य लोगों के समकक्ष नहीं है । वह अब पर्वतों उपत्यकाओं में विचरने वाला, वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य का आस्वादन करने वाला, सीधी सादी मल्लिका से प्रेम करने वाला पुराना कालिदास नहीं बलिक काश्मीर का शासक मातृगुप्त है । इसीलिए मल्लिका द्वारा कालिदास पुकारा जाना उसे सहन नहीं होता "अब वे मातृगुप्त के नाम से जाने जाते हैं ।" (पृ.६९)

वह मल्लिका के सहज सौंदर्य की प्रशंसा करती है और उस "ग्राम प्रदेश के सौंदर्य की भी सचमुच वैसी ही हो जैसी मैंने कल्पना की थी ।" (पृ.६६) "इस सौंदर्य के सामने जीवन की सब सुविधाएँ हेय हैं । इसे आँखों में व्याप्त करने के लिए जीवन भर का समय भी पर्याप्त नहीं ।" (पृ.६८) परंतु प्रशंसा का यह भाव स्थायी नहीं है । शीघ्र ही इस सबसे भिन्न और महान होने का अहंकार उसे घेर लेता है "आज इस भूमि का आकर्षण ही हमें यहाँ खींच लाया है । अन्यथा दूसरे मार्ग से जाने में हमें अधिक सुविधा थी ।" "(पृ.६७) एक प्रदेश का शासन बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है ।...... यूँ वहाँ के सौन्दर्य की ही इतनी चर्चा है, परन्तु हमें उसे देखने का अवकाश कहाँ रहेगा ?" (पृ.६८) सत्ता और अधिकार का मद प्रायः लोगों को संवेदनहीन बना देता है । प्रियंगुमंजरी भी मल्लिका की भावनाओं को जानते हुए भी उसकी चिंता नहीं करती । इसीलिए वह उसके घर की दीवारों को गिरा कर उसका 'परिसंस्कार कराने, अनुस्वार अनुनासिक जैसे मूर्ख राजकर्मचारियों से विवाह करने, अपनी सहचरी बनाकर उसे अपने साथ ले चलने का प्रस्ताव रखती है । ये सभी प्रस्ताव हास्यास्पद भी हैं और अपमानजनक भी और विदुषी राजकुमारी की गरिमा के प्रतिकूल भी । प्रियंगुमंजरी एक ओर विचित्र बात कहती है कि वह यहाँ का कुछ वातावरण अपने साथ ले जाना

चाहती है जिससे कालिदास को यहाँ का अभाव अनुभव न हो । "इस वातावरण के अंग हैं कुछ हरिणशावक, यहाँ की औषधियाँ, यहाँ के कुछ घर, मातुल और उनका परिवार गाँव के कुछ अनाथ बच्चे ।" (पृ.७१) राजकुमारी की यह सोच कितनी सतही है । वह अपनी हर बात से अपने और मल्लिका के स्तर के अंतर को रेखांकित करना चाहती है । वह प्रकारान्तर से जताना चाहती है कि कालिदास भी अब उससे बहुत दूर, बहुत आगे निकल चुके हैं और अब मल्लिका को कालिदास के प्रति मोह या उसके प्रत्यागमन की प्रतीक्षा छोड़ देनी चाहिए जिससे कि कालिदास का मन भी स्थिर हो सके, वह स्वयं को राज्यकार्य और साहित्य रचना में निर्द्वन्द्वभाव से संलग्न कर सके "मैंने तुमसे कहा था कि मैं यहाँ का कुछ वातावरण साथ ले जाना चाहती हूँ । यह इसलिए कि उन्हें अभाव का अनुभव न हो । उससे कई बार बहुत क्षति होती है । वे व्यर्थ में धैर्य खो देते हैं, जिसमें समय भी जाता है, शक्ति भी । उनके समय का बहुत मूल्य है । मैं चाहती हूँ उनका समय उस तरह नष्ट न हुआ करे ।" (पृ.७१)

वस्तुतः नाटककार ने प्रियंगुमंजरी और मल्लिका दोनों को आमने सामने रखकर दोनों के चरित्रों के मूलभूत अंतर को स्पष्ट किया है । सारे दर्प, अहंकार और वाकपटुता के बावजूद प्रियंगुमंजरी का चरित्र मल्लिका के चरित्र के सम्मुख निस्तेज प्रतीत होता है ।

४.७ मातुल

मातुल कालिदास के अभिभावक हैं इसलिए कालिदास पर अपना पूर्ण अधिकार समझते हैं । 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में उनकी उपस्थिति एक अवसरवादी, चापलूस और अतिव्यावहारिक चरित्र के रूप में दिखाई देती है । प्रथम अंक में उनका प्रवेश होता है । वे कालिदास से नाराज हैं क्योकिं वे राजकीय सम्मान के प्रति अपनी तत्परता नहीं दिखा रहे बल्कि उससे उदासीन हैं । उन्हें इस बात से प्रसन्नता नहीं है कि कालिदास इतना प्रतिभाशाली हैं कि उन्हें राजकीय सम्मान के योग्य समझा गया है । वे इस बात से नाराज हैं कि वे अपनी इस प्रतिभा का उपयोग अधिकार और वैभव की प्राप्ति के लिये क्यों नहीं कर रहे बल्कि हाथ में आये अवसर को भी अपनी मूर्खतापूर्ण जिद के कारण खो रहे हैं मेरी समझ में नहीं आता कि इसमें क्रय विक्रय की क्या बात है । सम्मान मिलता है, ग्रहण करो । नहीं, कविता का मूल्य ही क्या है ? (पृ.२६) लोकनीति में निपुण मातुल की यह स्थूल बुद्धि है जो साहित्य और कला के सौंदर्य को, उसके मर्म को समझने में असमर्थ है । मातुल के स्वभाव की अधीरता

उन्हें पाठकों दर्शकों के समक्ष हास्यास्पद रूप में भी ले आती है । कभी(कभी तो ऐसा लगता है कि वे सारी दुनिया से नाराज हैं । राजकीय सम्मान के प्रति कालिदास की उदासीनता पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं

"सुनकर रुके । रुक कर जलते अंगारे की-सी दृषिट से मुझे देखा । मैं राजकीय मुद्राओं से क्रीत होन के लिय नहीं हूँ । ऐसे कहा जैसे राजकीय मुद्राएँ आपके विरह में घुली जा रही हों, और चल दिये ।" (पृ.३१) निक्षेप से इसलिए नाराज हैं कि वह अतिथियों को घर में छोड़कर उनके आदेशों की अवहेलना करता हुआ यहाँ आ गया है । "यह भी कहा था । किंतु वह भी तो कहा था । यह कहाँ तुम्हारी समझ में आ गया, वह नहीं आया ?" (पृ.२९)

यही मातुल प्रियंगुमंजरी के सम्मुख चिकनी चुपड़ी बातें करता, उसके आगे पीछे घूमता, उसकी खुशामद करता दृषिटगत होता है, "आपके कारण मैं थकूँगा? मुझे आप दिन भर पर्वत शिखर से खाई में और खाई से पर्वत शिखर पर जाने को कहती रहें, तो भी मैं नहीं थकूँगा । मातुल का शरीर लोहे का बना है, लोहे का । आत्मश्लाघा नहीं करता, परंतु हमारे वंश में केवल प्रतिभा ही नहीं, शरीर शक्ति भी बहुत है ।" (पृ.६६) वस्तुतः उसका स्वर समय और अवसर के अनुकूल बदलता रहता है । कालिदास अकिंचन है, अनाथ है, दुनियादारी से बहुत दूर है, उससे रुखाई से पेश आने में कोई खतरा नहीं । किंतु प्रियंगुमंजरी राजपुत्री है, सत्ता और अधिकारों की स्वामिनी है, उसकी नाराजगी से हानि हो सकती है । एक व्यवहार कुशल महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति की भाँति उसकी भी लालसा है कि वह अभाव पूर्ण जीवन से मुकित पाकर विलासपूर्ण जीवन जिये, दूसरे लोग उसके प्रभाव और अधिकार के समक्ष नतमस्तक हों । इसी लालसा से प्रेरित होकर वह कालिदास पर उज्जयिनी जाने के लिए दबाव डालता है, बिना इस बात की चिन्ता किये हुए कि कालिदास की मानसिकता पर इसका क्या और कितना प्रभाव पड़ेगा । वह स्वयं भी अपना घर द्वार पशु आदि छोड़कर राजधानी में जा बसता है । हालाँकि कुछ समय के अनन्तर उसका मोहभंग हो जाता है । पहाड़ो की खुरदरी भूमि पर पशु चराने वाला मातुल राज प्रसाद के चिकने संगमरमर पर फिसल कर अपनी टाँग तुड़ा बैठता है । उसे इस बात में भी कोई औचित्य नहीं दिखता कि कोई विशेष योग्यता न होते हुए भी लोग उसके आगे पीछे क्यों घूमते हैं ।

वस्तुतः प्रथम प्रकार का आचरण उसकी महत्त्वाकांक्षाओं से प्रेरित है और दूसरे प्रकार का आचरण कृत्रिम जीवन से मोहभंग और अंतर्मथन का परिणाम ।

४.८ दन्तुल

दन्तुल एक राजपुरुष है । नाटक में उसके दर्शन हमें अपने बाण से आहत हरिणशावक के अधिकार के लिये कालिदास से तर्क वितर्क करते हुए होते हैं । सत्ता का अंग होने के कारण उसके व्यक्तित्व में उद्धतता, है, दर्प और अहंकार है । इन प्रवृतियों की अभिव्यक्ति उसके तर्कों और वार्तालाप में होती है । राजपुरुष होने के कारण उसे सामान्य जनों से अधिक अधिकार प्राप्त हैं और उसके अधिकारों को कोई चुनौती नहीं दे सकता । प्रजा का सुख दुख, उनकी भावनाएँ राजपुरुषों की दृष्टि में महत्त्वहीन हैं । ग्रामीण अशिक्षित निर्धन जनों की सादगी उन्हें उनकी मूर्खता का पर्याय प्रतीत होती है । दन्तुल की दृष्टि में वन्य पशु जीवन नहीं है, केवल उनका शिकार हैं या फिर उनकी संपत्ति । निम्नाकिंत उद्धरण दन्तुल की मानसिकता के स्पष्ट संकेत देते हैं ।

“परंतु यह हरिण शावक, जिसे बाहों में लिये हैं, मेरे बाण से आहत हुआ है । इसलिए यह मेरी संपत्ति है ।

× × × ×

तो राजपुरुष के अपराध का निर्णय ग्रामवासी करेंगे । ग्रामीण युवक, अपराध और न्याय का शब्दार्थ भी जानते हों ।

× × × ×

समझदार व्यक्ति जान पड़ते हो । फिर भी यह नहीं जानते हो कि राजपुरुषों के अधिकार बहुत दूर तक जाते हैं ?” (पृ.१८)

४.९ निक्षेप

निक्षेप एक ग्रामीण युवक है जो संवेदनशील है छल छदम से रहित मितभाषी और मृदुभाषी है । कालिदास की प्रतिभा और उसकी सामर्थ्य के प्रति वह आश्वस्त है इसीलिए वह मल्लिका से कालिदास को राजकीय सम्मान स्वीकार करने के लिये राजी करने का आग्रह करता है । “वह जानता है कि केवल योग्यता पर्याप्त नहीं होती । उस योग्यता को प्रमाणित करने के अवसर भी अपेक्षित हैं और राज्य की भूमिका इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है । योग्यता एक चौथाई व्यकितत्व का निर्माण करती है । शेष पूर्ति प्रतिष्ठा द्वारा होती है ।” (पृ. ३२)

कालिदास और मल्लिका के स्नेह संबंध से भी वह भली भाँति परिचित है । कालिदास को मिलने वाले राजकीय सम्मान से वह उत्साहित है परंतु इस बात से दुखी भी है कि मल्लिका को उसके वियोग में अकेले ही रहना पड़ेगा । दूसरे अंक में भी वह कालिदास से संबंधित प्रवादों से आहत अनुभव कर रहा है । उसे मल्लिका का त्याग और तपस्या निरर्थक सी प्रतीत होती है ।

इस प्रकार निक्षेप का चरित्र गौण होते हुए भी अपनी संवेदनशीलता और समझदारी के कारण प्रभावशाली बन पड़ा है ।

४.१० रंगिणी, संगिनी

नाटककार ने इन दोनों स्त्री पात्रों का परिचय नागरी रूप में दिया है । ये दोनों कालिदास के परिवेश पर शोध करने के उददेश्य से वहाँ आई हैं । किंतु शोध के लिये जिस सतह भेदी की आवश्यकता होती है वह उनके पास नहीं है । कालिदास जैसी असाधारण प्रतिभा की भूमि, उनका परिवेश भी असाधारण ही होगा ऐसी उनकी परिकल्पना है । परंतु सब कुछ 'साधारण देखकर वे निराश होकर चली जाती हैं । ये दोनों पात्रा आधुनिक शोध प्रक्रिया का उपहास सा करने लगती हैं ।

४.११ अनुस्वार, अनुनासिक

ये दोनों राजकर्मचारी हैं जो प्रियंगुमंजरी के आगमन से पूर्व मल्लिका के घर की व्यवस्था में यथोचित परिवर्तन करने के लिये आए हैं । परंतु वास्तव में कुछ भी परिवर्तन किये बिना वापिस लौट जाते हैं । परिवर्तन के उददेश्य के प्रति उनका तर्क था राजकुमारी की सुविधा(असुविधा और परिवर्तन न करने के पीछे उनका तर्क है आपसी असहमति, धैर्य का अभाव और सबसे महत्त्वपूर्ण इच्छा शक्ति का अभाव । ऐसी स्थिति में वे केवल खानापूरी करके चले जाते हैं । ये दोनों राजकर्मचारी हमारी व्यवस्था के प्रतीक हैं । जो करना कुछ नहीं चाहते परंतु बहुत कुछ करने का दंभ करते हैं ।

पंचम अध्याय

५.१ उपसंहार

'आषाढ़ का एक दिन' हिन्दी के युगान्तरकारी नाटककारों में से एक मोहन राकेश जी की एक कृति है । इस नाटक को हिन्दी साहित्य में इसलिए जाना जाता है क्योंकि इस नाटक से हिन्दी रंगमंच में यथार्थवाद की उस समय नयी परम्परा को एक बहुत मजबूत प्रोत्साहन मिला । मोहन राकेश ने अपने नाटकों में विषय और किरदारों को ध्यान में रखते हुए भाषा का इस्तेमाल किया । ऐतिहासिक पृष्ठभूमि वाले इस नाटक में संस्कृतनिष्ठ हिन्दी का प्रयोग किया है ।

पुस्तक के प्रारम्भ में ही मोहन राकेश जी ने कहा है कि हिन्दी रंगमंच पाश्चात्य रंगमंच से अत्यधिक भिन्न है । हमारे पास उपलब्धियों को देखने के लिए पाश्चात्य रंगमंच ही है क्योंकि हिन्दी रंगमंच किसी एक विचार विशेष से बंधा हुआ नहीं है ।

नाटक का कथानक कालिदास और उनकी बचपन की प्रेमिका मल्लिका के इर्द गिर्द घूमता है । विलोम कालिदास का स्वघोषित मित्र है और कुछ आलोचनात्मक समीक्षाओं में उसे इस नाटक का खलनायक भी कहा जा सकता है लेकिन अगर उसे खलनायक कहकर छोड़ दिया जायेगा तो इस पात्र के विकास को कम करके आंकना होगा । विलोम को स्थान-स्थान पर उलाहना का भी सामना करना पड़ा है और समय-समय पर नायक के आदर्शवाद को दिखाने के लिए भी विलोम का प्रयोग किया गया है । ऐसा कहा जा सकता है कि इस नाटक में कालिदास आदर्शवाद के प्रतीक हैं और यथार्थवाद से उनकी कशमकश का बाक़ी पात्रों पर पड़ते हुए प्रभाव को राकेश जी ने बखूबी दर्शाया है । वहीँ दूसरी ओर विलोम को यथार्थवाद का प्रतीक माना जा सकता है । उसकी बातें और उसके द्वारा उठाये गए कदम समाज की चलती हुई परिपाटी द्वारा प्रमाणित कदम माने जा सकते हैं और परिस्थितियों के आगे विवश होकर मल्लिका को भी अंत में यथार्थ के आगे नतमस्तक होना ही पड़ता है ।

तसर्थ 'आषाढ़ का एक दिन' मोहन राकेश जी का पहला और सर्वोत्तम नाटक ही नहीं, आज के हिन्दी नाटक की पहली महत्वपूर्ण उपलब्धि है । जिसकी बजह से हिन्दी नाटक और रंगमंच को भारतीय नाटकों और रंगमंच को समीप लाने का श्रेय जाता है ।

५.२ टिप्पणी

१. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - १६,१००,२०,६३,३७

२. मोहन राकेश ओर उनके नाटक - पृ. - १५७,३५

३. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ३५,३१,३२,१५,१८

४. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - १०२

५. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ४०-४५

६. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - २३,२९

७. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ५१,५२

८. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ८६

९. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ७१/७२,७४,७५

१०. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ३८,३९

११. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - १३

१२. आषाढ़ का एक दिन - मोहन राकेश, पृ. - ६६,६७,६८

५.३ सहायक पुस्तक

१. हिन्दी साहित्य : डाँ. धीरेन्द्र, नागेद्र, व्रजेश्वर वर्मा, डाँ.हजारी प्रसाद द्विवेदी, डाँ.रधुवंश, तृतीय खण्ड (१९६९), भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग ।

२. हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास : डाँ. दशरथ ओझा, राजपाल एण्ड सन्ज, नई दिल्ली ।

३. आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच : नेमिचन्द्र जैन (१९७८)

४.मोहन राकेश की रंगसृष्टि : जगदीश शर्मा

५.नाटककार मोहन राकेश : संपादक सुंदरलाल कथूरिया

६.आधुनिक नाटक का मसीहा : गोविन्द चातक

७. साहित्य लोक : त्रिभुवन विश्वविद्यालय हिन्दी केन्द्रीय विभाग का मुखपत्र, साहित्य लोक (२०१७/पृ.१-८)

८. मोहन राकेश और उनके नाटक : गिरीश रस्तोगी